नीड़ की ओर

मदन गुप्ता सपाटू

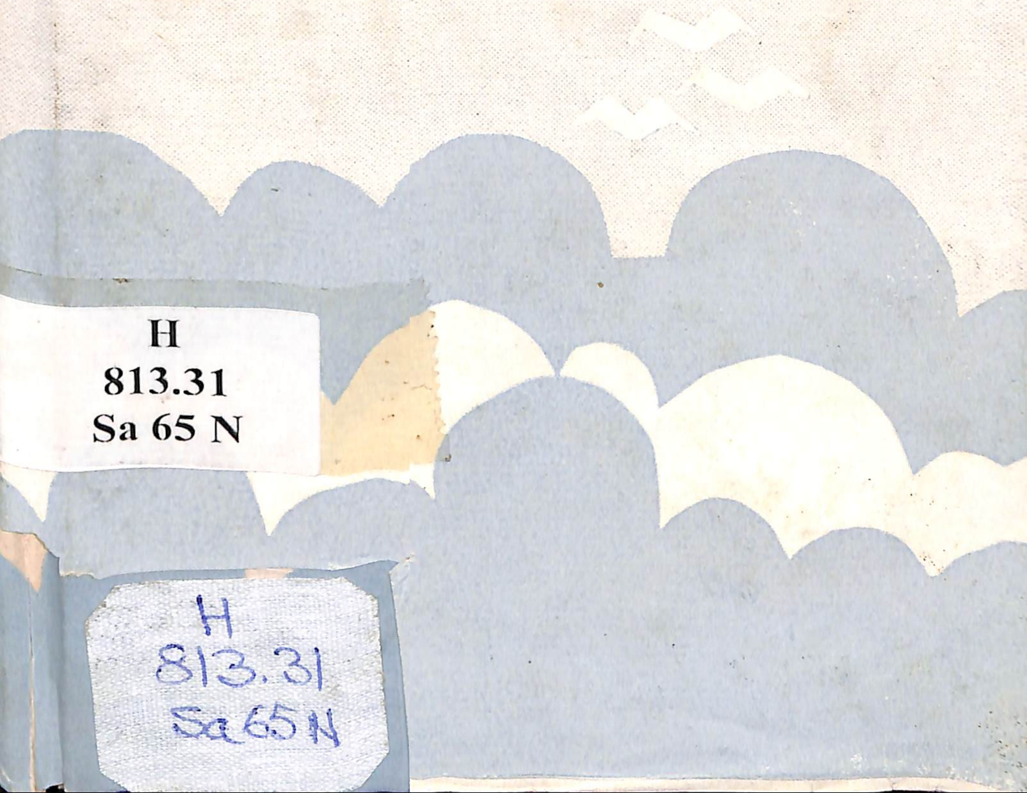

H
813.31
Sa 65 N

H
813.31
Sa 65 N

कभी-कभी बहुत हल्की-फुल्की चीज भी अंदर तक झकझोर जाती है, कुछ ऐसा ही इस संग्रह 'नीड़ की ओर' की कहानियों के बारे में कहा जा सकता है। संग्रह की कहानियां बहुत गूढ़ नहीं हैं, न ही बहुत कठिन भाषा व दर्शनीय अंदाज में लिखी हुयी हैं पर फिर भी ये कुछ कहती प्रतीत होती हैं।

बहुत ही हल्के-फुल्के ढ़ंग से व सरल भाषा में लिखी ये कहानियां कहीं दूर तक अपने निशां छोड़ती हैं। लेखक ने जो कुछ भी अपने आस-पास महसूस किया है उसे बिना किसी अतिशयोक्ति के लिख दिया है। इन दस कहानियों में जहां 'नीड़ की ओर' कहानी पति-पत्नी के रिश्तों में उत्पन्न हुयी उत्कंटता व ठंडेपन को दर्शाती हुयी अपने में गंभीर है वहीं 'यात्रा' कहानी यात्रा संस्मरण होते हुये भी अपनी अलग छाप छोड़ती है। 'टारगेट' में समाज के हर वर्ग में फैले भ्रष्टाचार को बैंकिंग को आधार बनाकर दर्शाया है तो दूसरी ओर 'शुभ चिन्ता' में आज मानव के स्वाभाविक आचरण व स्वभाव की ओर लेखक ने कलम उठायी है।

इस संग्रह की कहानियों से महसूस किया जा सकता है कि लेखक का कैनवास बहुत छोटा होते हुए भी सिमटा हुआ नहीं है उसके पास कहने को बहुत कुछ है।

नीड़ की ओर

चित्रकूट
दिल्ली कलकत्ता

नीड़ की ओर

Neer Ki oar

Madan Gupta Sapatu

मदन गुप्ता सपाटू

Chitrakut,
Delhi

चित्रकूट
दिल्ली कलकत्ता

Library IIAS, Shimla
H 813.31 Sa 65 N
G1288

H
813.31
Sa 65 N

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
G-1288
30.4.92

कलकत्ता
चित्रकूट
प्रैसीडेंसी कोर्ट,
55, गरिहाट रोड़,
कलकत्ता-700019

© लेखक : 1988

प्रथम संस्करण 1988
मूल्य : पच्चीस रुपये
प्रकाशक : चित्रकूट 6, सुख विहार, दिल्ली-110051
आवरण : अनिता दास
मुद्रक : नूतन आर्ट, भागीरथ पैलेस, चांदनी चौक, दिल्ली-6

भूमिका

रचना—सरोकारों की स्वनिर्मित परिधि के अतिक्रमण की अक्षमता के कारण आज की रचना कुछ जाने-पहचाने मुद्दों तक ही सिमट कर गई है। जीवन के परिमित अनुभव, सामाजिक सचाइयों की सतही पहचान और वर्गावरोहण की प्रक्रिया से गुजरने की कोशिश किए बगैर, उधार ली हुई क्रान्तिकारी अन्तर्वस्तु और कनपटी-मार मुहावरे के बल पर विद्रोही मसीहा बनने की विक्षिप्त धुन ही आज की अधिकांश रचनाओं में मिलती है। परिणामस्वरूप वह न केवल कोल्हू के बैल की मानिन्द एक ही आवर्त में चक्कर काटने का एहसास पैदा करती है, बल्कि छद्म और झूठी भी प्रतीत होने लगती है।

यों तो मदन गुप्ता सपाटू का कथा-संसार भी इन्हीं चिर-परिचित धागों और सूत्रों से बुना गया है, किन्तु पात्रों और घटनाओं के पीछे लेखक की ईमानदारी और मानवीय तकलीफ़ के प्रति गहरी संवेदना का एहसास, उसके द्वारा उकेरे गए संसार को एक बड़ी सीमा तक उक्त गए इन कमजोरियों से मुक्त करता है और अपने समय की सचाइयों को सीधे और जीवन्त साक्षात्कार के एक प्रयत्न के धरातल पर लाकर खड़ा कर देता है।

ज़िन्दगी के असह्य और दमघोंटू वातावरण और उसके लिए जिम्मेदार वर्ग के शोषण अन्याय और उत्पीड़न की वास्तविकता को बेबाकी से उघाड़ते हुए भी लेखक ने संयम को हाथ से नहीं जाने दिया। गाढ़े रंगों से परहेज की आदत उसके चित्रों का भोंडा होने से ही नहीं बचाती, उन्हें ज्यादा प्रामाणिक भी बनाती है।

"टारगेट" का माड़ू राम अभिशप्त है अंधेरे में सांस लेने के लिए। आज़ादी की चालीसवीं वर्षगांठ भी दूर दूर तक रोशनी की एक किरण तक

उसके जीवन में नहीं ला सकी है—"गांव बदल गया है। माड़ू में सभी कुछ वैसा है। बदलता है तो उसके चश्में का नम्बर और खांसी की लम्बाई। उसके घर की छत अभी तक मिट्टी की ही बनी हुई है। चश्में की कमानी टूट गई थी, उसने धागा बांध लिया साफ है कि माड़ू राम के माध्यम से उस आम आदमी की छवि उजागर हुई है जो देश की समस्त विकास योजनाओं के आदि और अन्त का मूलाधार होते हुए भी इनमें अपने लिये कोई सही जगह नहीं ढूंढ़ पा रहा।

"टारगेट" का वह पूरी तरह झन्ना जाता है जब व्यवस्था के सरगना, निरन्तर उसकी बद से बदतर होती जीवनचर्या को सुधारने के लिये उसे बैंक से लोन दिलवाने की बजाए उसमें अड़ंगा ही लगाते हैं और एक ईमानदार बैंक अधिकारी को माड़ू राम की सहायता करने के अपराध में स्थानान्तरण का अभिशाप भोगना पड़ता हैं। कहने की जरूरत नहीं कि राजनीतिक विसंगतियों और विडम्बनाओं पर सीधे-सीधे प्रहार करने की बजाय, उसकी जकड़न में छटपटाती मानवीय ज़िन्दगी के ज़रिये राजनीतिक तन्त्र की असलियत के अनावरण की यह कोशिश, निश्चय ही अधिक प्रभावी है।

"नीड़ की ओर" कहानी में चिड़ी-चिड़े के माध्यम से निरन्तर एकरस्ता के दंश को भोगते पति-पत्नी की मानसिक यंत्रणा को उकेरा गया है। चिड़े का पंखे से टकरा कर पंख-पंख होकर फर्श पर बिखर जाना और तिस पर भी शुचि का प्रतिक्रियाहीन रहना वस्तुतः दांपत्य जीवन में आ गए ठंडेपन की संवेदना को ही मूर्त करता है।

"सूख-सूख फट्टी" में दो बच्चों के अन्तर्जगत की उहापोह को मार्मिक ढंग से विश्लेषित किया गया है। आज जब जीवन की भागम भाग में जीवन के सभी रस स्रोत सूख गए हैं, तब एक यही स्रोत शेष बचा है जो भीतर की धरती को शस्यश्यामला किए हुए हैं।

'रूका हुआ फैसला' की सार्थकता इस बात में निहित है कि यह परिवार-नियोजन जैसे चालू विषय की प्रस्तुति इस ढंग से करती है कि पाठक को इस बात का अहसास तक नहीं होता कि लेखक किसी निश्चित उद्देश्य को ध्यान में रखकर कहानी कह रहा है।

उम्र के बढ़ते हुए बोझ के साथ एक शिशु को एक सुरक्षित भविष्य दे पाने की असमर्थता के कारण लिया गया फैसला जहां स्थिति की विद्रूपताओं को उकेरता है, वहीं एक सवाल भी पाठकों की तरफ उछालता है—'यही कि मैं इसे नहीं रखना चाहती। एक बच्चा और रख कर गृहस्थी चलानी

मुश्किल है' और उसका आप्रेशन थियेटर से बाहर निकल कर यह सोचना समस्या को एक नए संदर्भ में देखने की दृष्टि प्रदान करता है—'कुछ घंटे बाद बाहर आने पर उसे लगा पेट के निचले हिस्से के भार के साथ साथ दिमाग का भार भी कम हो गया है।'

वस्तुतः मदन गुप्ता सपाटू के पहले कहानी-संग्रह 'नीड़ की ओर' की कहानियां इस सत्य को व्यक्त करती हैं कि यहां जीने के लिए वह सब कुछ नहीं है, जो होना चाहिए। अंदाज़, अनुमान, शायद, हां शायद, ऐसा भी हो सकता है और ऐसा भी—कुछ भी निश्चत नहीं है। जिन्दगी में एक खास तरह का निर्थकता बोध हर समय दिल और दिमाग को बुरी तरह जकड़े रहता है।

'जरूरत', 'बदलाव', 'निम्मो', और 'यात्रा' कहानियां पारिवारिक माहौल, सामाजिक परिवेश और राजनीतिक वातावरण के प्रति पात्रों की प्रतिक्रियाओं की कहानियां हैं। विशेष बात यह है कि ये कहानियां प्रतिक्रिया से शुरू होकर समार्थिक दबावों के परिणामों, प्रभावों और टूटने की विवशता में ही समाप्त नहीं हो जाती बल्कि और गहरे उतरती हैं और इस प्रक्रिया में पात्र आत्मालाप और आत्मसाक्षात्कार करते हुए देखे जा सकते हैं। परिणाम-स्वरूप ये रचनाएं पाठक को पराजय-बोध में ग़र्क करने की बजाय उसकी संघर्ष-चेतना को धार देती हैं।

यह भी साफ है कि इन कहानियों के रचनाकार को दलीय राजनीति के स्वार्थों में ढली हुई स्थितियों की बनी बनाई पहचान और सांचा-बद्ध समाधान को वरीयता देना स्वीकार्य नहीं। वह किसी मतवाद से प्रतिबद्ध नहीं है, किन्तु वंचित, पद दलित, मूक व बेज़ुबान, जन-समूह के हितों और जरूरतों से जरूर जुड़ा हुआ है। मदन गुप्ता सपाटू की कहानियों में आंसू, आहें, चीखो-पुकार, भावनात्मक मोड़ और ट्रेजडी के तत्वों और उपादानों को तलाश करने वालों को निराशा होगी, किन्तु जो इसमें मानव मन के एकान्तिक कोनो की व्यवस्था और जीवन के ठोस सवालों और मुद्दों तथा उनसे जूझते और संघर्ष करते हुए मनुष्यों की पीड़ा के निजी अनुभवों को परानुभवों से जोड़कर अपनी सोच को अधिक पुख्ता और अपनी समझ को ज्यादा समृद्ध बनाने के इच्छुक हैं, उन्हें इन कहानियों की यात्रा का अपना श्रम सार्थक और मूल्यवान प्रतीत होगा।

यश गुलाटी
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
पंजाब युनिवर्सिटी,
चण्डीगढ़-१

क्रम

नीड़ की ओर : 9
टारगेट : 22
जरूरत : 34
कांच्छी : 40
निम्मो : 47
बदलाव : 52
सूख सूख फट्टी : 60
शुभ चिन्ता : 67
यात्रा : 81
रुका हुआ फैसला : 92

नीड़ की ओर

मार्च का अन्त ।

इस वर्ष गर्मी बढ़ने का कोई आसार नहीं लग रहा था । असमय वर्षा हो जाने से सुबह शाम ठंडक आ गयी थी । इसलिए मार्च में चलने वाला पंखा अक्टूबर से ज्यूं का त्यूं एक ही दशा में रुका पड़ा था । उसका सफेद रंग इस कदर मैला पड़ चुका है, लगता है कंपनी के पहले बैच से निकला है ।

इस सीलिंग फैन की रॉड के ऊपर वाला प्लास्टिक का कप एक चिड़िया के बार-बार चोंच मारने से नीचे सरक आया था । वैसे भी मैकेनिक को पंखा लगाते समय मैंने कप को पूरी तरह कस देने के लिए कहा था । पर मैकेनिक, मैकेनिक ही होते हैं । छोटी-मोटी चीजों और बातों की तरफ ध्यान नहीं देते, पंखा चलाते समय भी उसमें कट-कट की आवाज आती रही और कप धीरे-धीरे नीचे को खिसकता रहा था जो चिड़िया के बार-बार बैठने और चोंच मारने से बिल्कुल नीचे सरक आया ।

कुछ दिनों बाद उसमें से तिनकों ने झांकना आरम्भ कर दिया । लगता था नीड़ का निर्माण हमारे बैड रूम में ही संपूर्ण होना था ।

पंखा बैड रूम में ठीक मेरे बैड के ऊपर है । कभी-कभी सोचता हूं यदि मैकेनिक, रॉड का नट भी कप के नट की तरह अधकसा ही छोड़ गया हो तो...।

कई बार इसी भय से मैं रात को एक दम किनारे हो जाता हूं ।

एक दिन सुबह-सुबह कुछ तिनके मेरी आंखों में गिरे थे । चिड़िया और मैकेनिक पर बड़ा गुस्सा आया था । ऊपर से चिड़िया और उसकी चूं-चूं और

क्रम

नीड़ की ओर : 9
टारगेट : 22
जरूरत : 34
कांच्छी : 40
निम्मो : 47
बदलाव : 52
सूख सूख फट्टी : 60
शुभ चिन्ता : 67
यात्रा : 81
रुका हुआ फैसला : 92

नीड़ की ओर

मार्च का अन्त ।

इस वर्ष गर्मी बढ़ने का कोई आसार नहीं लग रहा था । असमय वर्षा हो जाने से सुबह शाम ठंडक आ गयी थी । इसलिए मार्च में चलने वाला पंखा अक्टूबर से ज्यूं का त्यूं एक ही दशा में रुका पड़ा था । उसका सफेद रंग इस कदर मैला पड़ चुका है, लगता है कंपनी के पहले बैच से निकला है ।

इस सीलिंग फैन की रॉड के ऊपर वाला प्लास्टिक का कप एक चिड़िया के बार-बार चोंच मारने से नीचे सरक आया था । वैसे भी मैकेनिक को पंखा लगाते समय मैंने कप को पूरी तरह कस देने के लिए कहा था । पर मैकेनिक, मैकेनिक ही होते हैं । छोटी-मोटी चीजों और बातों की तरफ ध्यान नहीं देते, पंखा चलाते समय भी उसमें कट-कट की आवाज आती रही और कप धीरे-धीरे नीचे को खिसकता रहा था जो चिड़िया के बार-बार बैठने और चोंच मारने से बिल्कुल नीचे सरक आया ।

कुछ दिनों बाद उसमें से तिनकों ने झांकना आरम्भ कर दिया । लगता था नीड़ का निर्माण हमारे बैड रूम में ही संपूर्ण होना था ।

पंखा बैड रूम में ठीक मेरे बैड के ऊपर है । कभी-कभी सोचता हूं यदि मैकेनिक, रॉड का नट भी कप के नट की तरह अधकसा ही छोड़ गया हो तो...।

कई बार इसी भय से मैं रात को एक दम किनारे हो जाता हूं ।

एक दिन सुबह-सुबह कुछ तिनके मेरी आंखों में गिरे थे । चिड़िया और मैकेनिक पर बड़ा गुस्सा आया था । ऊपर से चिड़िया और उसकी चूं-चूं और

फुर्र-फुर्र के कारण नींद भी जरूरत से पहले ही खुल जाती है ।

न चाह कर भी उसकी हरकतें देखनी पड़ती हैं । वह पंखे के ऊपर से उड़ती, खिड़की की ग्रिल पर बैठती और न जाने कहां चली जाती । क्षण भर में ही फुर्र से लौट आती और पंखे के कप में तिनके जमा कर देती ।

मुझे लगा उस कहानीकार को चिड़िया की कहानी सुनाने की प्रेरणा भी ऐसी चिड़िया ने ही दी होगी जिसमें एक राजा ने एक ऐसे व्यक्ति को ईनाम देने की घोषणा की थी जिसकी कहानी कभी समाप्त न हो । उसने भी इस चिड़िया जैसी ही कहानी सुनाकर इनाम जीत लिया था । उसकी कहानी की नायिका चिड़िया एक गोदाम में आती और गेहूं का एक दाना चोंच में भरकर फुर्र से उड़ जाती । न अनाज का भंडार समाप्त हो और न कहानी ।

कुछ इसी प्रकार से हमारे कमरे की नायिका चिड़िया भी यही करती रही । एक तिनका लाती और कप में छोड़ जाती ।

अखबार आने से पहले मेरी हैडलाईन या फर्स्ट स्टोरी चिड़िया और उसके तिनके ही होते ।

शुचि को चिड़िया के आने जाने से कोई मतलब नहीं था । न ही उसे कभी पक्षियों या पशुओं में रूचि ही रही । डाक्टर सालिम अली तो मैं भी नहीं था पर इस छोटे से पक्षी के आने-जाने से मेरे सुबह-सुबह के रुटीन में एक आईटम अवश्य जुड़ गया था ।

शुचि को इस जीव से कोई अन्तर नहीं पड़ा । वह सुबह एक रोबट की तरह उठती, चाय बनाती, नहाने चली जाती । उसके नहाते-नहाते कुकर सीटी मारने लगता और मैं किचन में जाकर गैस 'लो' कर आता ।

चिड़िया का आना जाना, कुकर की सीटी बजना, अखबार और दूध का आना, शुचि का नहाना, गुरुद्वारे से शब्द कीर्तन की ध्वनि-लहरें उठना, मंदिर से घंटों की आवाजें आना, सब कुछ साढ़े पांच और छः बजे के बीच चलता रहता । कभी-कभी इन आवाजों के बीच 'ब्रेड मक्खन', 'ताजा साग लौ जी', 'अज शनिवार या शुक्रवार ए' जैसी आवाजें भी आती रहतीं ।

लेकिन इन सभी के बीच अखबार पढ़ते-पढ़ते मैं यह अवश्य देख लेता कि वह चिड़िया अब क्या कर रही है।

जिस दिन वह तिनका लाने में देर कर देती मुझे लगता आज मंगतराम अखबार नहीं फेंक गया है और छटपटाहट सी लगती। चिड़िया के आवगमन में उस कहानी सी एकरसता होते हुए भी उसकी प्रतीक्षा करनी सुखद लगती।

दिल्ली से लौटने पर चिड़िया के आने-जाने में मुझे हल्का सा परिवर्तन अनुभव हुआ। उसके आने-जाने का अंतराल कम हो गया था और गति बढ़ गई थी। वह बाहर जाती और न जाने कैसे बिजली की फुर्ती से तिनका ले आती।

अगले दिन सुबह मैंने नोट किया बड़ी गहराई से वह वही चिड़िया नहीं थी। वे दो प्राणी थे वास्तव में जिनका भेद मुझे पिछले दिनों पता नहीं लगा था। दूसरा जीव चिड़ा था। उसे ध्यान से देखने पर लिंग भेद हो पाया। उसके गले में काला धब्बा था, दूसरे उसके स्वर में एक पुरुषत्व भी था।

चिड़िया बोलती तो चिड़ा उत्तर देता। हमारा मार्निंग अलार्म डबल हो गया। पहले चिड़ी उठती फिर चिड़ा महाशय। इनके वार्तालाप से मेरी नींद हर हालत में खुल जाती।

शुचि दूसरे कमरे में सोती, इसलिए उसे इनसे कोई सरोकार न था।

कभी-कभी दोनों प्राणी मेरे बाथरूम जाते ही पंखे से बैड पर उतर आते और फुदक-फुदक कर प्रेमालाप करते। एक दूसरे के पीछे भागते। कभी चिड़िया पंखे के एक ब्लेड पर बैठ जाती तो चिड़ा महाशय भी फुर्र से उसके दूसरे ब्लेड पर जा टिकते। फिर चोंच से चोंच टकराते। एक दूसरे की पीठ खुजलाते। इस सबसे दिल भर जाता तो आम के पेड़ की एक ठूठ पर बैठ जाते।

हम दोनों के आफिस जाते ही वे दोनों भी अपने-अपने दाने-चुग्गे की तलाश में निकल पड़ते क्योंकि शुचि मकान के कमरों की खिड़कियां दरवाजे रोशनदान अच्छी तरह बन्द कर के निकलती थी। इस लाईन में कई चोरियां रोशनदान के कारण ही हुई थी।

शाम के समय हममें से जो भी पहले ग्राफिस से लौटता, उन दोनों को पेड़ की डाली पर बड़ी ग्रातुरता से प्रतीक्षारत पाता। दरवाजा या खिड़की खोलते ही वे बड़े वेग से कमरे में घुसते ग्रौर पंखे के कप पर जा बैठते।

मैं बिस्तर पर फैल कर शुचि के चेहरे को चिड़िया के चेहरे से मिलाने की कोशिश करता।

शुचि उन दोनों जीवों से बेखबर होकर चाय बनाती ग्रौर डिनर को तैयारी ग्रारम्भ।

रात होते ही वे दोनों पंखे के ब्लेड पर ग्रा बैठते ग्रौर हमारे साथ दूरदर्शन के राष्ट्रीय कार्यक्रमों का ग्रानन्द लेते। कभी कभार किसी कार्यक्रम में किसी कौवे या चिड़िया का क्लोज ग्रप ग्राता तो दोनों में फुसफुसाहट होती।

कई बार वे दोनों बीच में ही प्रोग्राम छोड़ कर उठ जाते ग्रौर कप वाले घोंसले में छिप कर खुड़क खुड़क की ग्रावाज करने लगते।

इन ग्रावाजों की ग्रोर शुचि का ध्यान जाता तो वह संज्ञाहीन होकर या तो किसी पत्रिका में ग्रांखें गड़ाए रहती या फिर टी वी में।

मैं चाहता, वह पंखे के कप से ग्राती ग्रावाज पर कुछ 'कमेंट' करे— ग्रच्छा या बुरा पर मेरी ग्रर्थपूर्ण दृष्टि निरर्थक ही रह जाती।

एक रात्रि वे दोनों पक्षी 'डबल डेकर' विमान बन कर कमरे में ग्रापाधापी मचा रहे थे शुचि ने कई बार ताका। मेरा ध्यान उसके चेहरे पर ही था। महीने का शायद ग्रन्तिम दिन था। उसके स्टोर की चैकिंग होती है ग्रन्तिम दिन। शायद बहुत थक गई थी वह। लेकिन उसका तो हर दिन ही महीने का ग्राखिरी दिन होता है।

पंखे की रॉड में लगा हुग्रा कप नीचे सरक कर उनका एच. ग्राई. जी. क्वार्टर बन चुका था जिसमें हर प्रकार की सुविधा उपलब्ध थी।

नीचे डबल बैड था जिस पर दोनो जब दिल करता ग्राकर चहल कदमी कर लेते। बरामदे में वाश बेसिन के टपकते नल से जब चिडिया चाहती फ्रैश हो लेती। जो कुछ किचन में बनता उसमें उन दोनों सजना सजनिया का भाग निहित था। मिस्टर व मिसेज चिड़ा को नौकरी पर जाकर बिजली

पानी गैस का भी कोई इन्तजाम करने की विवशता नहीं थी। शुचि एक तिड़की हुई प्लेट में उनका लंच बाहर बरादमे में मनी प्लांट के नीचे रख जाती। चिड़ा दंपति हमारे मेहमान थे।

प्लेट की एक ओर श्रीमती चिरैया और दूसरी ओर श्रीमान चिड़ा ऐसे बैठते मानो वृताकार डाईनिंग टेबल पर मेहमाननबाजी फरमा रहे हो। बैठे-बैठे वे बतियाते जाते चार जहां की बातें। चुहलबाजी करते। कभी-कभार लड़ भी पड़ते।

उनके लड़ने पर मैं शुचि की ओर देखता शायद वह दोनों के गृहयुद्ध पर ही कोई टिप्पणी करे। पर हमेशा की तरह उसका चेहरा भाव शून्य रहता।

एक रात जब जनाब चिड़ा, मोहतरमा के पीछे ही पड़ गये तो मैंने शुचि को कहा, "...देखो ये...।"

शायद उसने बिना देखे ही उनकी हरकतों का अनुमान लगा लिया होगा।

कुछ देर चुप्पी के पश्चात वह भड़क उठी थी, "पांच रुपये का पूरा झाड़ इन्होंने नोच-नोच कर साफ कर दिया है, कल ही बिजली वाले को बुलाकर ये गंद साफ़ करवाओ। पंखे भी ग्रीज कर जाएगा और...।"

शुचि की इस बात को टालना मैं जानता था हम दोनों के लिए ही अच्छा नहीं हो सकता था।

फिर भी मैं अगले दिन इस बात को टाल गया था।

"इलैक्ट्रिशियन मिला नहीं" कह कर मैंने उस घोंसले पर दृष्टिपात किया।

चिड़ी-चिड़ा अपने घर को नगर पालिका के ढाह देने वाले कड़े आदेशों से वेखबर पंखे के ब्लेड़ों पर फुदक रहे थे। कहीं 'एन्फोर्समेंट स्टाफ' यानि सेवासिंह बिजली वाला मिल जाता तो इनका हश्र भी शहर में बलात् कब्जा जमाए रेहड़ी मार्किटों के दुकानदारों की तरह हो जाता।

और सेवासिंह नहीं मिला सुन कर शुचि ने जो कुछ समझा होगा उसका मुझे आभास उसकी शक्ल देखकर हो गया था। सेवासिंह के आने का सीधा मतलब था एक अच्छे भले टी. वी. सीरियल का गला घुट जाना।

वैसे भी शुचि उस दिन ग्राफिस में स्टॉक चैकिंग से परेशान थी। उसे ग्रपने बॉस से सख्त शिकायत रहती थी। उसके छुट्टी चले जाने पर या तो उसकी सीट पर कोई बैठता नहीं था। यदि बैठता था तो उसके बैठने का परिणाम हर मास के ग्रंतिम दिन वेरीफिकेशन पर भुगतना होता जिसे वेतन से काट दिया जाता। ऊपर से नाईट डूयूटी लगा दी जाती। इसलिए बॉस से उसकी पटरी की फिश प्लेटें उखड़ी हुई थीं।

एक सांय जब मैं लौटा तो एक मैकेनिक हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। शुचि की नाईट डयूटी थी इसलिए वह चार बजे ही घर से चली गई थी।

"बीबी जी ने पंखा ठीक करने को बोला था" कह कर वह दरवाजा खोलते ही मेरे पीछे-पीछे ग्रन्दर ग्राकर पंखे की ग्रोर ताकने लगा। उसने स्वयं टेबल खिसकाया ग्रौर उस पर कुर्सी रखकर चढ़ गया। उसे मना करने का साहस मैं जुटा नहीं पाया। चिड़िया के लिए मैं ग्रपने घोंसले के तिनके नहीं उखड़वाना चाहता था। बड़ी कड़ी मेहनत के बाद मैंने पापा जी से बैर मोल लेकर इस नीड़ का निर्माण किया था।

वह पंखे के कप का नट खोल रहा था, मैं जानबूझ कर किचन में ग्रा गया ग्रौर चाय बनाने लगा।

"बाबू जी...," उसने ग्रावाज दी।

"घास बाहर फेंक दो," मैंने उसके ग्रपेक्षित प्रशन का उत्तर पहले ही दे दिया।

"नहीं सॉब, इस दे विच्च तिन्न ग्रंडे ने, सुट्ट दवां ?"

उबलती चाय को छोड़कर मैं बैडरूम की ग्रोर लपका।

"न् न न्...ये पाप नहीं करना...ऐसे ही ग्रीज कर दो बिना कप उतारे"

"एदां किवें हो सकदा ए?"

"तो रहने दो," कह कर उसे पांच का नोट थमाया ग्रौर चाय का कप पकड़ा दिया।

दो-चार घूंट में ही उसने कप खाली किया ग्रौर पूछा, "बाबू जी 204 नंबर किस गली विच होवेगा?"

काफी देर से गले में अटके थूक को मैंने भीतर धकेला और बताया, 'पिछली गली में।''

''उत्थे वी पंखा खराब है,'' कहते हुए उसने साईकल स्टैंड से उतारी और चढ़ गया।

□

नाईट ड्यूटी समाप्त कर जब शुचि लौटी, मेरे दफ्तर का समय हो चुका था। अंडों की बात सुनकर वह सहमत हो गई।

कुछ दिनों बाद एक सुबह उस कप से चूं-चूं की आवाजें आने लगीं। थोड़ी देर के बाद लाल रंग की तीन चोंचें बाहर निकलने का प्रयास करने लगीं। चोंचें बाहर निकलतीं और अन्दर गिर जातीं।

चिड़िया दम्पति दौड़-दौड़ कर उनके लिए चोंच में कुछ न कुछ खाने के लिए भर लाते और अपने मुंह में चबा-चबा कर उनकी खुलती बन्द होती चोंच में टपका देते। नये प्राणियों की आंखों पर अभी भी एक झिल्ली चिपकी हुई थी।

तीनों चूजों की महीन-महीन आवाजें रात-विरात समय-असमय आने लगीं। सुबह बैड पर चाय पीते समय उनकी रेशमी आवाजें और आकृतियां देखने के लिए मेरे कान माईक की तरह खिंच जाते और आंखों में जूमिंग लैन्स लग जाते।

काफी दिनों से मुझे शेव करने में बहुत परेशानी अनुभव हो रही थी इस मकान में आए हमें दो साल होने को थे पर वाश बेसिन पर शीशा लगवाने की बात जब भी होती तो बजट आड़े आ जाता। और कई आवश्यक वस्तुओं पर खर्च हो जाता पर शीशा रह जाता। शेव मैं बैड पर बैठ कर करता। इससे शुचि को बड़ी कोफ्त होती। इस प्रकार पसर कर शेव करते देख मेरी और आदतें भी पुरानी फाईल से निकल-निकल कर उसके सामने आ जातीं पर वह कहती कुछ नहीं।

चूंकि शीशे की अधिक आवश्यकता मुझे थी उसे नहीं, इसलिये इसे

लाना मेरी ही जिम्मेवारी थी। वह तो ड्रैसिंग टेबल पर ही काम चला लेती।

मेरा आलस्य और आदत की मजबूरी देख उसने एक दिन सुबह-सुबह वाश बेसिन पर एक बढ़िया सा लुकिंग मिरर टांग दिया। पहली बार मुझे शेव करने में बड़ा आनन्द आया था और मेरे मुंह से निकल पड़ा "थैंक्यू।"

हम दोनों की एक कामन छुटी थी वरन् दो अलग-अलग सरकारों के नौकर होते हुए एक ही शहर में रहते हुए कभी उसे छुट्टी होती तो मुझे नहीं, इसलिए ज्वाईंट प्रोग्राम बनाने में मुश्किल ही रहती। कई बार उसकी एमरजेंसी डयूटी लग जाती तो कामन छुट्टी का मजा भी लुप्त हो जाता। इसलिए गुड फ्राइडे की छुट्टी को उसने सफाई डे बना दिया। झाड़-पोंछ में मुझे फंसाये रखा। काम के पश्चात् सुस्ताने के लिए मैं बरामदे में कुर्सी डाल कर बैठा।

बैडरूम से चिड़ा उड़ा और दपर्ण के सामने 'फ्लाई पास्ट' करता हुआ आम के पेड़ की डाली पर जा बैठा। कुछ ही क्षण में वह फिर शीशे के सामने से उड़ता हुआ अपने बाल-बच्चों के पास पहुंच गया।

पाँच-दस मिनट में उसने पेड़ और पंखे के बीच अप्रत्याशित संख्या में उड़ान भरी।

इस बार उसने अपनी उड़ान में अपना एक स्टॉप वाश बेसिन पर रखा। मेरी तरह शीशे में शायद शक्ल देखी और घोंसले की ओर टेक ऑफ कर गया। चिड़िया शायद वहां नहीं थी। इसलिए वह पुनः शीशे के सामने आकर मंडराने लगा।

थक कर वह खुली हवा में निकल गया। चिड़िया थोड़ीं देर में वापस आ गयी।

चिड़ा भी पीछे-पीछे आ गया। बजाए अपनी रेगुलर फ्लाईट पर जाने के, वह वाश बेसिन पर लैंड कर गया। दोनों पंजे स्टाप कॉक पर अड़ा कर, हेलीकाप्टर की तरह वह सीधा ऊंचा उड़ता और अपना प्रतिबिम्ब देखता। बार-बार मिरर पर ठुक-ठुक चोंच मारता।

अगले दिन सुबह मैंने नोट किया, उसकी उड़ानें सधी हुई नहीं थीं। वह बार-बार खिड़की की ग्रिल से टकरा रहा था। निशाना चूक-चूक जाता। लड़खड़ा कर इधर-उधर टकरा रहा था। कुछ देर बाद शीशे पर लगे पेच पर पंजे गड़ा कर स्वयं को संतुलित करने के प्रयास में बार-बार बेसिन में गिर पड़ता।

चूज़ों के डैने निकल आये थे। वे भी फुर्र फुर्र कर उडारियाँ मारने लगे। चिड़िया उन्हें उड़ने में सहायता करने लगी। चोंच से उनकी गर्दन पकड़ती और घोंसले में ठूंस देती। पर बच्चे थे कि बाहर से अन्दर ही नहीं आना चाहते थे। चिड़िया को आम की ठूंठ पर बैठते कव्वों का भी डर था। न ज़ाने कब वे उनका ग्रास बन जायें!

चिड़ा इस परवरिश से उदासीन था।

पर शुचि, उसकी पंखे से शीशे तक की लोकल यात्रा से परेशान थी और तीन बच्चों की अतिरिक्त बीट की सफाई कर-कर के अलग झुंझला पड़ती थी।

इतवार को चिड़ा राम कपड़े टांगने वाली तार पर बैठे रहे। अंधेरा होने तक उसी पर झूलते रहे। घोंसले की ओर टकटकी लगाए रहे। कहीं से चिड़िया भी लौट आई और तार पर उसकी बगल में बैठ गयी। तार के साथ-साथ दोनों झूलते रहे। आम के पेड़ पर चिड़ियों के अन्य झुंड भी चीं-चीं कर रहे थे पर इस दम्पति का स्थायी निवास हमारे बैड रूम में ही था। इससे पहले भी घोंसले में दुबक जाने से पूर्व दोनों मियां बीबी तार पर झूला झूलते, दिनचर्या पर चर्चा करते, बाकी चिड़ियों से विचारों का आदान-प्रदान करते और अंधेरा गहराने पर आ जाते।

उस शाम चिड़िया जल्दी ही घोंसले में आ गई और बच्चों को सहलाने लगी। मगर चिड़ा काफी देर तार पर अकेला झूलता रहा, अधिक रात गए बिल्ली के डर से बरामदे में मनी प्लांट के गमले के पीछे बैठ गया।

शुचि उस सांय अपने किसी 'क्लीग' के गई हुई थी।

चिड़िया पंखे पर बैठी चिड़े के आने की प्रतीक्षा करती। मैं भी शुचि के

लेट होने से कुछ बेचैन था। चिड़िया रात भर चिड़े के इंतजार में पंखे पर ही बैठी रही, घोंसले में नहीं गई।

□

मेरी सैकेंड सैटर ड़े की छुट्टी थी और शुचि का 'हाफ डे'। मैं किचन में था और चिड़ा वाश बेसिन पर। उसका प्रतिबिम्ब से लड़ना जारी रहा। मैं उसे बार-बार श् श् श् करके उड़ाता पर वह मुड़-मुड़ आता।

उस रात भी चिड़ा अपने क्वार्टर में नहीं घुसा। चिड़िया ने उसे मनी-प्लांट के नीचे से कई बार बुलाया पर वह घोंसले की ओर नहीं उड़ा और वहीं इधर-उधर दुबका रहा।

चिड़िया भी "आना हो तो आ जायेंगे" सोचकर सो गयी क्योंकि पंखे से कोई आवाज नहीं आ रही थी।

उसके पतिदेव बरामदे में रखे टेबल के नीचे से रात-भर कभी पंखे की ओर ताकते तो कभी दर्पण को।

एक रात हम दोनों ने भी ऐसे ही काटी थी खन्ना को लेकर हम में शीत युद्ध चला था। उस दिन से शुचि बैडरूम में नहीं सोती।

अगले दिन इतवार था। अखबारों के रविवारीय संस्करण पढ़ने के लिए मैं और दिनों की तुलना में जल्दी उठ जाता हूं। चिड़िया मुझ से पहले ही बाहर के टेबल पर आ चुकी थी।

उसने चिड़े के पर साफ नहीं किये। चिड़े ने चोंच भी नहीं मिलायी। दोनों चुपचाप टेबल पर बैठे रहे। चिड़ा कभी कभार उठकर डाईनिंग प्लेट पर आ जाता था। रात शुचि वापिस नहीं लौटी थी इसलिए उसमें बचा हुआ खाना नहीं रखा गया था। चिड़े ने भी रात को कुछ नहीं खाया था। शुचि की प्रतीक्षा में मैंने भी कुछ नहीं खाया था।

उधर चिड़ा परिवार के तीनों बच्चे जवान हो चले थे। अपना अच्छा-भला खुद देख सकते थे। अतः समय के अनुसार उनका संयुक्त परिवार भी टूट गया। तीनों ने शायद अपने-अपने घोंसले अलग-अलग बना लिये होंगे

और अपने-अपने पार्टनर ढूंढ लिये होंगे।

पीछे चिड़ा-चिड़िया ही रह गये थे। चिड़ा महाशय काफी दिनों से घोंसले में नहीं घुसे थे। एक शाम दोनों बाहर की मुंडेर पर बैठे थे। चिड़िया उसे हल्के-हल्के धक्के दे रही थी। कभी उसके पंख सहलाती तो कभी शरारत में उसके ऊपर बैठ जाती। परन्तु चिड़ा साहब टस से मस नहीं हुए।

उसने वाश बेसिन पर बैठना भी बन्द कर दिया था। वह क्यारी की सूखी मिट्टी में लोटने लगा।

शकुन शास्त्र के अनुसार यदि चिड़िया मिट्टी में लोटे तो वर्षा होती है। वर्षा का कोई आसार नहीं था। वह क्यूं लोट रहा है इसका कारण मैं भली प्रकार जानंता था। मेरी मिट्टी डबल बैड की चादर थी जिस पर एक रात में ही हजारों शिकनें पड़ जाती हैं।

चिड़ा-चिड़ी दोनों चुप थे। मुझे भी शुचि की चुप्पी खलती है। इस शहर में उसकी कोई कालेजमेट नहीं है यह मुझे मालूम है। वह किस क्लीग के घर जाती है इसका एहसास मुझे देहरादून से लौटने पर हो गया था।

यह जानते हुए भी कि मैंने शनिवार को अपनी ट्रेनिंग से लौट आना है, वह खन्ना के घर बर्थ डे पार्टी में बिजी रही।

वापिस लौटने पर यूं तो अधिक गर्मी नहीं हुई थी पर मैंने पंखा चला दिया और बैड पर पसर गया। पंखा पांच नंबर पर था मेरा शरीर एक सौ पांच डिग्री पर।

चिड़िया तेजी से घूमते पंखे से बच कर घर की चार दीवारी से बाहर निकली। चिड़ा मौका देखते ही कप में घुस गया।

कप में घास के सिवा कुछ न था। वह पुनः वाश बेसिन पर लौटा फिर घोंसले की ओर मुड़ा। वह घोंसले में काफी देर किसी को तलाशता रहा जो उसे वाश बेसिन के समीप आकर नजर आता है।

टी. वी. पर शुचि एक विदेशी कहानी का हिन्दी रूपांतर देखने में व्यस्त थी। कहानी का नायक अपने ड्राईंग रूम में एक अलमारी के आगे दीवार

चिनवा रहा है। उसे शक है कि पत्नी का प्रेमी इसी अलमारी में छिपा है। नायिका इसे चुपचाप होने देती है और कुछ नहीं कहती।

शुचि बड़े गौर से नायिका के प्रेमी को चिनते हुए निहार रही है। मैं शुचि के चेहरे को पढ़ने की कोशिश करता हूं। लेकिन उसका मुंह सदा की भांति भाव शून्य है। इसलिए कुछ अनुमान नहीं लगा पाता कि इस कहानी का उस पर क्या प्रभाव पड़ रहा है।

चिड़े ने प्रतिबिम्ब से लड़ना फिर शुरू कर दिया है। वह गुस्से से भरा हुआ था। चिड़िया भी कहीं से लौट आई है। उसकी उड़ान में एक हड़बड़ाहट है।

□

शुचि के चेहरे पर कोई भाव नहीं है पर उसने पंखे का रेगुलेटर घुमा दिया है।

चिड़ा घोंसले से निकलते ही असंतुलित हो गया। पटाक से फर्श पर आ गिरता है। उसके पंखों के छोटे-छोटे टुकड़े कमरे के चारों कोनों में लहरा रहे हैं।

अन्तिम साँसें ले रहा है। फ्रिज से पानी की बोतल निकाल कर उसकी चोंच पर डालता हूं। वह सिकुड़ कर एक टिकिया सी बन गया है।

चिड़िया ऐसे मौके पर कहीं से उड़कर आ गई है। मुझे देखकर निकट आने का साहस नहीं जुटा पा रही। उसकी इस विवशता को देख मैं दूर हट जाता हूं। वह धीरे-धीरे खिसक कर सावित्री की मुद्रा में अपने सत्यवान के निकट बैठ गई है।

"अब देख क्या रहे हो ? इसे उठाकर बाहर फेंको ! सारा फर्श गंदा कर दिया है। गंदगी मचा रखी थी इन्होंने। कल ही पंखे का घास-फूस बाहर फिकवाती हूं, कमरे की दीवारें भी साफ करनी पड़ेगी," शुचि के स्वर में आदेश था।

चिड़िया ने एक बार दर्पण को ताका फिर मुझे···एक गत्ते पर अपने पति के पार्थिव शरीर को सिमटते देखा।

अगले दिन सुबह मेरी आंख बहुत जल्दी खुल गई। कप से कोई आवाज नहीं आई। मुझे लगा कल समाचार पत्र का कार्यालय किसी "राष्ट्र नेता" के निधन के कारण अपना एडीशन नहीं निकाल सका।

शुचि आश्वस्त थी, अब कमरा साफ रहेगा।

मैं दर्पण के सामने आ गया हूं।

तय नहीं कर पाया प्रतिबिम्ब में कौन है ?

मैं या खन्ना ?

चिड़ा या मैं ?

□

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. G-1288
Date 30.4.92

टारगेट

तीस वर्ष पहले वह स्कूल के गेट के बाहर एक छाबड़ी लगा कर बैठा करता था। हरे रंग के छोटे से शोकेश पर मैल की काली परत चढ़ जाने से वह बदरंग हो चुका था। इस शोकेश में लकड़ी की दराजें व खाने बने हुए थे जिनमें उबले चने, गुडगट्टा शहर की एक छोटी सी बेकरी के धारीदार बिस्कुट और रंग-बिरंगी घटिया गोलियां रखी होती थीं। चीजें बच्चों की पसंद और मौसम के बदलाव के साथ-साथ बदलती रहती।

स्कूल प्राईमरी तक था। आधी छुट्टी में बच्चों के झुंड उसे मक्खियों की तरह घेर लेते और देखते ही देखते उसका सारा सामान समाप्त हो जाता।

बच्चे घंटी बजते ही कक्षाओं में लौट आते और माड़ू राम घर आ जाता, कुछ देर सुस्ता कर खाना बनाता और पूरी छुट्टी से थोड़े सा पहले फिर स्कूल के गेट के पास काली दीवार के आगे टाट बिछाकर शोकेस सजा देता।

स्कूल की घंटी के साथ ही उसकी दिनचर्या बंधी थी। स्कूल में छुट्टी तो माड़ू की भी छुट्टी। फिर वह मन्दिर जाने वाली सड़क के एक किनारे पोस्ट आफिस वाली दीवार की टेक लगा लेता जहां गांव में आने जाने वाले लोग उससे मूंगफली, चने टाफियां वगैरा खरीद लेते।

कभी-कभी पोस्ट मास्टर उसे अवश्य तंग करता। सरकारी दफ्तर के आगे उसे बैठने से मना करता। तो माड़ू छाबड़ी उठाए सराय तक का चक्कर मार आता।

आज भी माड़ू राम उसी स्कूल के आगे बैठता है खाने-पीने की वस्तुयें

बदल गई हैं। शोकेस वहीं है। जहां-जहां शीशों में तिड़कन है, उसने स्टिकर चिपका दिये हैं। जगह-ज़गह शोकेस में कीलें ठोंककर उसने किसी तरह उसे चालू रखा है अपनी तरह।

अब वह शहर की बेकरी से बिस्कुट नहीं लाता। चलते नहीं हैं। बच्चे रैपर में बन्द क्रीम वाले बिस्कुट ही पसंद करते हैं। गुड़गट्टे की जगह चाकलेट रख ली है। मुरमुरे बच्चों के दांतों से चबाए नहीं जाते, एक बच्चे का दांत ही उखड़ गया था। बच्चे अब मुरमुरों की जगह पापकार्न खाते हैं कभी-कभी शहर से एक आईसक्रीम वाला भी गर्मियों में आ टपकता है। बच्चे फिर माडू बुड्ढे को भूलकर उस नवयुवक का घेराव करते हैं जो घटिया आइसक्रीम 'कोन' में भरकर 'सॉफ्टी' कहकर बेचता है।

स्कूल दस जमा दो हो गया है, माडू अस्सी जमा दो का। पोते-पोतियां नाती-नातिनों वाला है पर सभी अपनी-अपनी जगह शहरों में फिट हो गए हैं चिट्ठी-पत्री आ जाती है कभी। एक बार बड़ा लड़का परिवार सहित आया था माडू को लेने। लेकिन अपनी पुरानी आदत के अनुसार वह किसी पर आश्रित नहीं रहना चाहता। उसे मालूम है, उसकी आदतें न बच्चे पसंद करते हैं न बहुएं, फिर काहे को बुढ़ापे में वक्त खराब किया जाए।

अंग्रेजी फौज की नौकरी के बाद जीवन-यापन के लिए उसने स्कूल के आगे ही बैठना ठीक समझा था।

गांव की उम्र में भी तीस वर्ष जुड़ चुके हैं। कच्चे मकान पक्के हो चुके हैं। सराय के पास नम्बरदार ने पंचायत की जमीन पर कब्जा करके नई दुकानें बनवा कर किराये पर उठा दी हैं।

बैलगाड़ियों की जगह टेंपो ने ले ली है। दिन में दो बार शहर से बसें आती हैं। कुछ गांव वालों ने ट्रैक्टर भी खरीद लिए हैं। स्कूल की जिस दीवार पर माडू टेक लगाता है, उस की दीवार पर टीवी का एक विज्ञापन पेंट हुआ है।

माडू को इस दीवार से विशेष प्रेम है। जहां वह पीठ लगाता है, उसके पत्थर चिकने हो गये हैं। और उसकी कमीज में वहां-वहां छेद भी दिखाई देते हैं। इन तीस वर्षों में उसने स्थान नहीं बदला है।

टारगेट

तीस वर्ष पहले वह स्कूल के गेट के बाहर एक छाबड़ी लगा कर बैठा करता था। हरे रंग के छोटे से शोकेश पर मैल की काली परत चढ़ जाने से वह बदरंग हो चुका था। इस शोकेश में लकड़ी की दराजें व खाने बने हुए थे जिनमें उबले चने, गुडगट्टा शहर की एक छोटी सी बेकरी के धारीदार बिस्कुट और रंग-बिरंगी घटिया गोलियां रखी होती थीं। चीजें बच्चों की पसंद और मौसम के बदलाव के साथ-साथ बदलती रहती।

स्कूल प्राईमरी तक था। आधी छुट्टी में बच्चों के झुंड उसे मक्खियों की तरह घेर लेते और देखते ही देखते उसका सारा सामान समाप्त हो जाता।

बच्चे घंटी बजते ही कक्षाओं में लौट आते और माडू राम घर आ जाता, कुछ देर सुस्ता कर खाना बनाता और पूरी छुट्टी से थोड़े सा पहले फिर स्कूल के गेट के पास काली दीवार के आगे टाट बिछाकर शोकेस सजा देता।

स्कूल की घंटी के साथ ही उसकी दिनचर्या बंधी थी। स्कूल में छुट्टी तो माडू की भी छुट्टी। फिर वह मन्दिर जाने वाली सड़क के एक किनारे पोस्ट आफिस वाली दीवार की टेक लगा लेता जहां गांव में आने जाने वाले लोग उससे मूंगफली, चने टाफियां वगैरा खरीद लेते।

कभी-कभी पोस्ट मास्टर उसे अवश्य तंग करता। सरकारी दफ्तर के आगे उसे बैठने से मना करता। तो माडू छाबड़ी उठाए सराय तक का चक्कर मार आता।

आज भी माडू राम उसी स्कूल के आगे बैठता है खाने-पीने की वस्तुयें

बदल गई हैं। शोकेस वहीं है। जहां-जहां शीशों में तिड़कन है, उसने स्टिकर चिपका दिये हैं। जगह-जगह शोकेस में कीलें ठोंककर उसने किसी तरह उसे चालू रखा है अपनी तरह।

अब वह शहर की बेकरी से बिस्कुट नहीं लाता। चलते नहीं हैं। बच्चे रैपर में बन्द क्रीम वाले बिस्कुट ही पसंद करते हैं। गुड़गट्टे की जगह चाकलेट रख ली है। मुरमुरे बच्चों के दांतों से चबाए नहीं जाते, एक बच्चे का दांत ही उखड़ गया था। बच्चे अब मुरमुरों की जगह पापकार्न खाते हैं कभी-कभी शहर से एक आईसक्रीम वाला भी गर्मियों में आ टपकता है। बच्चे फिर माड़ू बुड्ढे को भूलकर उस नवयुवक का घेराव करते हैं जो घटिया आइसक्रीम 'कोन' में भरकर 'सॉफ्टी' कहकर बेचता है।

स्कूल दस जमा दो हो गया है, माड़ू अस्सी जमा दो का। पोते-पोतियां नाती-नातिनों वाला है पर सभी अपनी-अपनी जगह शहरों में फिट हो गए हैं चिट्ठी-पत्री आ जाती है कभी। एक बार बड़ा लड़का परिवार सहित आया था माड़ू को लेने। लेकिन अपनी पुरानी आदत के अनुसार वह किसी पर आश्रित नहीं रहना चाहता। उसे मालूम है, उसकी आदतें न बच्चे पसंद करते हैं न बहुएं, फिर काहे को बुढ़ापे में वक्त खराब किया जाए।

अंग्रेजी फौज की नौकरी के बाद जीवन-यापन के लिए उसने स्कूल के आगे ही बैठना ठीक समझा था।

गांव की उम्र में भी तीस वर्ष जुड़ चुके हैं। कच्चे मकान पक्के हो चुके हैं। सराय के पास नम्बरदार ने पंचायत की जमीन पर कब्जा करके नई दुकानें बनवा कर किराये पर उठा दी हैं।

बैलगाड़ियों की जगह टेंपो ने ले ली है। दिन में दो बार शहर से बसें आती हैं। कुछ गांव वालों ने ट्रैक्टर भी खरीद लिए हैं। स्कूल की जिस दीवार पर माड़ू टेक लगाता है, उस की दीवार पर टीवी का एक विज्ञापन पेंट हुआ है।

माड़ू को इस दीवार से विशेष प्रेम है। जहां वह पीठ लगाता है, उसके पत्थर चिकने हो गये हैं। और उसकी कमीज में वहां-वहां छेद भी दिखाई देते हैं। इन तीस वर्षों में उसने स्थान नहीं बदला है।

उसके सामने जो बच्चे कमीज पायजामा पहन कर आते थे अब वे अपने बच्चों को स्कूटर पर छोड़ने आते हैं। छोटे-छोटे बच्चे निक्कर, टाई, स्कूल की नीली वर्दी में खूब फबते हैं। माडू उन्हें देखकर बहुत खुश होता है।

जब उसने इस स्कूल के आगे बैठना आरम्भ किया था, पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चे नजर नहीं आते थे। अब तो बच्चे ठीक से तुतला भी नहीं पाते कि मां-बाप उसकी आंखों के सामने स्कूल के हवाले कर जाते हैं और आप मियां बीवी शहर में नौकरी को दौड़ जाते हैं।

माडू के सामने-सामने ही नराते के लड़के ने बैंक से कर्जा लेकर करियाने की दुकान डाल ली है। खूब चल रही है। उसकी दुकान पर कई कंपनियों ने रंग-बिरंगे बोर्ड टांग दिये हैं।

सरपंच के लड़के ने भी दो ट्रक डाल दिये हैं। शहर में चलते हैं। और शहर के कई लोगों ने गांव में मुर्गीखाने और दूध की डेयरी खोल दी है। कालू ने भी सूअरों की लाइनें लगा दी है। शहर में बेचता है शायद।

कभी-कभी माडू सोचता है कि गांव वाले तो गांव छोड़ कर शहर भागते हैं लेकिन ये शहर वाले गांव में आकर क्यों धंधा शुरू करते हैं। सुबह-सुबह कार में एक सरदार जी आते हैं और मुर्गी खाने का चक्कर लगाकर चले जाते हैं। मुर्गियों के चूजों का व्यापार करते हैं वो शायद।

गांव का काफी कुछ बदल चुका है। एक बार शिक्षा मंत्री ने स्कूल का अचानक दौरा किया था। माडू को भी उनके कई चमचों ने वहां से उठा दिया था। उनके आने से एक फायदा हो गया था। वह ये कि स्कूल तक की सड़क पक्की हो गई थी। माडू ने सुना था कि एक बहन जी को स्वेटर बुनते देख मंत्री जी ने डांटा था। एक को गायब रहने के कारण शायद सस्पैंड भी कर गए थे। वह भी पहुंच वाली थी। बाकायदा स्कूल आ रही है।

गांव का कायाकल्प हो रहा है। समग्र क्रांति है। टटपूंजियें जायदाद बनाये बैठे हैं। जिनके पास कुछ रूपये थे उन्होंने उसे गुणा करने का तरीका सीख लिया है। जो नहीं समझे वे माडू राम बने रह गये।

गांव बदल गया है। माडू में सभी कुछ वैसा है। बदला है तो उसके चश्मे का नंबर और खांसी की लंबाई। उसके घर की छत भी अभी मिट्टी की ही

बनी हुई है। चश्मे की कमानी टूट गयी थी, उसने धागा बांध लिया।

पेंशन लेने एक बार शहर गया था। "फ्रेम, बदलवाने से तो अच्छा है चार जून रोटी खाई जाए" सोच कर उसने हिसाब लगाया कि अंग्रेजों के जमाने में उसे जितना कुछ मिलता था, उससे उसने अपने बच्चों को तंगी नहीं आने दी थी और आज ऐनक का फ्रेम ही उसकी पूरी पेंशन बन गया है।

गांव में बैंक खुल जाने के बाद गांव में एक परिवर्तन आया है। माडू के देखते ही देखते क्या कुछ नहीं बदल गया है।

उसका मन भी कई बार हुआ है कि वह ज़मीन से उठकर रेहड़ी तक उठ खड़ा हो। या फिर छोटी-मोटी दुकान कर ली जाए। स्कूल का प्रिंसिपल भी उसे धमकी दे चुका है कि उसकी चीजों से बच्चे बीमार हो जाते हैं। किसी दिन वह अंदर भी करा देगा। इस पर माडू में छिपा अंग्रेजी सर-कार का फौजी एक बार जाग उठा था और प्रिंसिपल चुपचाप स्कूल के भीतर लौट गया! शीशे से माडू का हांकना ताकता रहा।

निहाल चंद माड्र को कई बार बैंक से बातचीत करने के लिए उकसाता हैं। बातचीत से उसका मतलब कर्जा लेने से ही है। पर माडू का बैंक तो लाला र.मलाल ही हैं। कभी कभार जब माडू उससे सौदा लेने जाता है लाला बैंक को बहुत गालियां देता है। लाला रामलाला का गालियां देना स्वाभाविक भी है। उसके लेन-देन पर इसका बहुत असर पड़ा है। इसीलिए वह माडू को बैंक की बात करते ही चुप करा देता है। पर गांव के कई लोग माडू को बैंक से कुछ सहायता लेने के लिए हमेशा कहते रहते हैं। फिर पिछले हफ्ते मुरारी ने तो शेर भी सुनाया उसे,

"ए माडू अब तू भी उठ कि जमाना बदल गया।"

उस दिन स्कूल में छुट्टी थी। माडू ने हिम्मत की और बैंक चला गया।

"मनीजर साहब कुछ माली इमदाद हमारी भी बैंक कर देता तो बहोत किरपा होती, रोज के रोज, पैसे लौटा दिया करूंगा," हाथ जोड़े वह कह रहा था।

"कितना कर्जा चाहिए माड़ू राम ? क्या काम करेगा ?" मैनेजर ने पूछा ।

"जो आप मुनासिब समझें—रेहड़ी बनवाना चाहता हूं । उस पे शहर से सामान लाकर रखूंगा...या फिर कोई दुकान मिल जाती तो बुढ़ापा कुछ आराम से कट जाता," ऐनक की डोरी को कान पर खींचते हुए वह बोला ।

"जमानत देगा कोई तुम्हारी ?"

"मेरी जमानत तो सारा गांव दे सके हैं सॉब ।"

"ठीक है कल आ जाना इसी वक्त," कहकर मैनेजर अपनी फायलों में व्यस्त हो गया ।

अगले दिन माड़ू जब बैंक पहुंचा तो जमादारनी साफ सफाई कर रही थी । बाहर सूरज की ओर चश्मे से देखते हुए उसने पूछा, "कितने बजे आवेंगे मनीजर सॉब ।"

"आज नहीं आवेंगे...एक मीटिंग में जाना हैं ।" सुनकर माड़ू घर लौट आया ।

अगले दिन भी वह वक्त से काफी पहले पहुंच गया था ।

"कोई जमानत लाया माड़ू राम ?" मैनेजर कपूर ने उसे बिठाते हुए पूछा ।

"मेरी कौन जमानत देबेगा मनीजर सॉब । कल कर्जा लेकर मर गया तो कौन भरेगा ? लाहौर में मैंने कई जमानते थाने में दी साब । तब जमानत का मतलब कुछ और था ।"

"अच्छा तो ये बताओ तुम्हारी जात क्या है?"

"गरीब की भी कोई जात होती है बाबू जी ? गरीबी तो खुद एक जात है ।"

"ठीक है कल या परसों, सरकारी अफसर जिले से आ रहे हैं...तेरा केस उनसे स्पांस्र करवा देंगे । पांच हजार के तीन हजार ही लौटाने पड़ेंगे," कहते हुए मैनेजर कपूर लैजर चैक करने लग गये ।

"बोत अच्छा सरकार" कह कर माडू बैंक के दरवाजे से उल्टा ही मुड़ा जैसे मन्दिर से लौट रहा हो।

"मिस्टर शर्मा...मेरे पास आना।" पास बैठे शर्मा जी तुरन्त कपूर के पास आ गये।

"हमें माडू राम की मदद जरूर करनी चाहिए। डायरेक्ट केस करना तो मुश्किल होगा। बेचारे को सबसिडी भी नहीं मिलेगी और हमारी फिगर भी पूरी नहीं हो पाएगी।"

"लेकिन कपूर साहब। माडू राम शैड्यूल कास्ट में कवर नहीं होता। और हमारे पास सारे केसेज़ इसी कैटेगरी के हैं," लोन अधिकारी ने अपनी स्थिति स्पष्ट की।

"तो आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग में इसे ले लो। कल बी. डी. ओ वगैरा आएंगे। इसका भी एक केस करवा लेना।

"ओके सर।" कह कर मिस्टर शर्मा डिस्ट्रिक्ट रूलर डेवेलपमेंट एजेंसी द्वारा भेजे गये फार्मों में पुनः व्यस्त हो गये।

तीसरे दिन एक जीप धुआं और गुबार उड़ाती हुई गांव में घुसी और बैंक के आगे रुकी।

इसमें से दो तीन अधिकारीनुमा लोग उतरे। उनके अन्दर आने पर कपूर, शर्मा व अन्य बैंक कर्मचारी अभिवादन की मुद्रा में खड़े हो गये।

चाय पानी की औपचारिकताओं के पश्चात् उनमें से एक बोला, "मि. कपूर आपकी ब्रांच में कितने केसेज डी. आर. डी. ए. ने भेजे हैं?"

"यही दो सौ के करीब," ऋण अधिकारी ने प्रबन्धक के स्थान पर उत्तर दे दिया।

"कितने केसों में काम हो चुका है?" बैंक के उप महाप्रबंधक ने पूछा।

"यही 50 फाईनल हो चुके हैं," कपूर बोला।

"आपने सभी केसों में लोन देना है...हमारा बैंक प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को दिये गये ऋणों में अभी पीछे है। रिजर्व बैंक ने, चेयरमैन से पूछा है। इसलिए आप अनुसूचित जातियों और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों को सेंट परसेंट फाईनांस करें। सबसिडी भी टाईम पर क्लेम करते जाओ।

केस ऑफ डिफाल्ट, यू नो मि. कपूर...यू आर लायबल,'' सहायक महाप्रबधक ने समझाया।

''हां डिपाजिट की पोजीशन क्या है...जरा वीकली रजिस्टर दिखाओ ?''

''और मेहनत करो, यू मे नॉट अचीव टारगेट इन दिस वे मिस्टर कपूर।''

''सर गांव में इतना पोटेंशियल कहां है डिपाजिट का...लोग पोस्ट आफिस में जमा कराते हैं या बीमे में। जिनके पास ज्यादा है वे शेयर खरीद लेते हैं,'' कपूर ने विवशता जाहिर की।

''वह तो ठीक है पर हमारा बैंक पीछे चल रहा है। ...यू मस्ट अचीव द टारगेट। और लोनिंग भी पूरी होनी चाहिये।''

तभी इस उच्चाधिकारी का ध्यान बैंक के सुरक्षा उपायों की ओर गया।

''शटर की चेन बहुत लम्बी है। इसमें केवल एक आदमी मुश्किल से पास होना चाहिए,'' उक्त अधिकारी ने कहा।

''सर मैंने आपके आफिस को कई बार सुरक्षा गार्ड देने के लिए लिखा है पर साल बाद भी कोई नहीं आया..., यहां तो खतरा हर वक्त बना रहता है'' प्रबंधक ने कहा।

''जब तक गार्ड की नियुक्ति नहीं हो जाती तब तक आप यहां के थाने से संपर्क बनाये रखें।''

''जी थाना यहां से दस किलो मीटर दूर है फिर गांव में कोई फोन भी नहीं कुछ हो जाय तो...।''

''मिस्टर कपूर बियर विद् द टाईम...ये तो ऐसे ही चलता रहेगा। आफ्टर आल रूरल ब्रांच इज ए रूरल ब्रॉंच,'' कहकर वे सभी जीप में चढ़ गये

अगले दिन फिर जिला अधिकारी के कार्यालय से एक जीप आकर बैंक के आगे खड़ी हुई। इसमें से पांच छः लोग उतर कर बैंक में घुसे।

परिचय के पश्चात चाय पीते हुए एक अधिकारी बोला, ''मि. कपूर... अगले महीने हम आपके गांव में एक लोन मेला आयोजित करने जा रहे हैं।''

''दैट्स गुड़, '' कपूर को न चाहते हुये भी कहना पड़ा।

''हमारे इस ब्लॉक का टारगेट बहुत पीछे चल रहा है। आपने अभी तक

हमारे भेजे हुए स्पांसर्ड केस क्लीयर नहीं किये हैं...काफी लोग शिकायत कर रहे हैं,'' खंड विकास अधिकारी बोले।

''—सर! हमने इनमें से कई केसों की वेरीफिकेशन की थी। यह गांव उच्च जातियों से भरा पड़ा है। लेकिन सारे केसों में इन्हें अनुसूचित वर्ग का बताया गया है जो आपके आफिस से फार्म आए हैं,'' कपूर ने आशंका व्यक्त की।

''अरे शैड्यूल कास्ट नहीं हैं तो जैसे हमने बना दिये वैसे तुम समझ लो ...आप भी मि. कपूर समझदार होते हुए ये छोटी-छोटी बात कर रहे हैं।'' डी. आर. डी. ए के एक अधिकारी ने कहा।

अतिरिक्त जिलाधीश का पी. ए जो विशेष रूप से इस गाँव में भेजा गया था, बोला ''कपूर साहब आपके ब्लाक का टारगेट बहुत पीछे है। इनमें अनुसूचित जातियों को सबसे अधिक कर्जे दिये जाने हैं। यदि पुरुष न हो तो उनकी स्त्रियों के नाम दिए जाएं। ए. डी. सी साहब ने कहा है कि आपके लोन कृषि क्षेत्र में कम से कम 90 प्रतिशत होने चाहिए। आप भैंसों पर ज्यादा से ज्यादा कर्जे दें।''

''भई फैमिली प्लानिंग का टारगेट तो इन डाक्टर साहब ने पूरा कर दिया अब फाईनेंसिंग का आपने करना है,'' एक सज्जन ने पास बैठे मैडिकल आफिसर की ओर ताकते हुए कहा।

''मैं आपके साथ हूं मैनेजर साहब...कौन क्या है, किसे लोन देना है... किसे नहीं। ये सब आप हम पर छोड़ दें...हम आपकी पूरी मदद करेंगे,'' सरपंच जी भी टपके।

''हां! एम. एल. ए साहब भी इस इलाके के दौरे पर हैं। आप तो जानते ही हैं मध्यावधि चुनाव कभी भी घोषित हो सकते हैं पार्टी की पोजीशन भी बनानी है। इसीलिए एम. एल. ए. साहब ने अगले महीने 'लोन मेले' के लिए कहा है। सभी को पैसा मिलना चाहिए। कोई भी कल ये न कहे कि मुझे तो कुछ मिला ही नहीं'' ये शब्द थे एक छुटभैये नेता के जो इलाके के विधायक का एजेंट था।

''हां। हां! ये दामोदर बाबू आपकी सेवा में हाजिर रहेंगे। बस लोन

मेले पर नोटों की बरसात होनी चाहिए मैनेजर साहब। इसके बाद चौधरी साहब के मिनिस्ट्री में पूरे-पूरे चान्स हैं इस बार। हाईकमान से मिल कर कल ही लौटे हैं। प्रैस से भी इस गाँव के मेले के बारे में बात हो चुकी है,'' विधायक के एक अन्य खलीफा ने बताया।

''एम. एल. ए. साहब ने कुछ नामों की लिस्ट सरपंच जी को दे दी है जिन्हें इस मौके पर कर्जे दिये जाने हैं,'' बैंक का एक अधिकारी बोला।

''आप कर्जे दिये जाओ बाकी हम पर छोड़ दो···आप भी ग्रामीण विकास करों और हमें भी करने दो,'' डी. आर. डी. ए. के एक सज्जन ने कहा।

''अच्छा कपूर साहब, हम चलते हैं, अभी पूरे ब्लॉक का दौरा करना है···सड़कें भी कई जगह टूटी फूटी हैं···पी. डब्लयू. डी. वाले लगवा दिये हैं। हो सकता है इस अवसर पर मुख्य मंत्री स्वयं आ जायें इसलिए आप भी सतर्क रहें,'' कहते हुए सभी जीप पर सवार हो गये।

कपूर अपनी सीट पर लौट आया। शर्मा उसे टुकुर-टुकुर ताक रहा था।

''सर स्पांसर्ड केसों में आपको मालूम है किन-किन के नाम हैं?'' शर्मा कपूर के सामने खड़ा हुआ बताने की मुद्रा में बोला—

''यही सरपंच जिसकी 50 कीले जमीन है, बाबू राम, जो खुद बी. डी. ओ. दफ्तर में है, सरपंच का भाई जिसके कई ट्रक हैं, सरदार जी जो पोल्ट्री फार्म चला रहे हैं और बायलर बेच रहे हैं मारुति में आते-जाते हैं, डाक्टर सिंगला की वाईफ जिसे यह मालूम नहीं कि भैंस का थन किधर होता है···ये हैं वे गरीब जिनकी वार्षिक आय निर्धारित सीमा से कम है और जिन्हें कर्जे चाहिए ऐश करने के लिए···और जब इंस्पैक्शन होती है तो टांगा जाता है हमें, मासिक रिर्पोट में हम झूठ बोलें कि हां हम भैंस की इंस्पैक्शन कर के आए हैं।''

खंड विकास अधिकारी, मेडिकल आफिसर पशु चिक्तिसक, सरपंच, पंचायत अधिकारी, डी. आर. डी. ए. के अधिकारी, निगम के कुछ कर्मचारी छुटमैया नेता, विधायक के एजेंट सभी जीप में लदे फदे गांव-गांव में निर्धनों

को ढूंढ़ रहे थे ताकि उनकी गरीबी दूर की जा सके, गावों का सवांगीण विकास किया जा सके।

यह मंडली एक रैस्ट हाऊस में ठहरी थी।

ग्रामीणों को गरीबी रेखा से उपर उठाने के उद्देश्य से सभी ने अपने-अपने हाथ ऊंचे उठाये और ब्लैक नाईट के पैगों से जलतरंग की मधुर ध्वनि के साथ ही ग्रामीण विकास का 'दौर' आरम्भ हो गया।

मुर्गे की टांग पर चप-चप दांत मारते हुए बी. डी. ओ. साहब ने पशु चिकित्सक से पूछा "डाक्टर के पुतर···अब तक कितनी भैंसों के सर्टिफिकेट दे चुका है?"

"अभी नौ सौ तीस हुए हैं सर···ये कपूर कुछ करे तो कल ही हजार का टारगेट पूरा," तनेजा ने झूमते हुए कहा।

"ओ ए सरपंच···कितने फार्म भिजवाये हैं हमारे पास," जिला ग्रामीण विकास एजेंसी के एक अधिकारी ने भी मदहोशी में रिपोर्ट ली।

"जी ढाई सौ तो पिछले हफ्ते ही जा चुके हैं।"

"इस बार इनाम हमें ही मिलेगा···शील्ड हमारे ब्लाक की पक्की समझिए। डाक्टर साहब ने बड़ा काम किया इस बारी···ए. डी. सी. साहब बहुत खुश हैं आपके काम से," बी. डी. ओ. कह रहा था और घूंट धकेल रहा था।

"अब इतनी वढ़िया टीम है तो प्राईज क्यूं न मिले···नेशनल इंटैग्रेशन है सॉब, इंश्योरेंश वाले सरदार जी भी आ गए हैं," कहकर पंचायत अधिकारी सहित सभी उसकी ओर मुड़े।

"वाह भई वाह···अज्ज बल्ले बल्ले हो रई ए," सरदार जी ने जाम पकड़ते हुए कहा।

"सैक्रेट्री," बी. डी. ओ ने आवाज दी।

"जी हजूर।"

"सरदार जी भी आ गये हैं इनसे भी अपना हिसाब कर लो...हजार केस हो चुके हैं जो भी फिक्स किया हो···ले लो," उन्होंने आदेश दिया।

"सरदार जी आपका भी इस साल का टारगेट अचीव हो गया है···

मुबारकें...अच्छा सैक्रेट्री से हिसाब कर लेना।"

"ओ वैटरिनरी साहब कहां गए...भई कितनी भैंसें मरी इन दिनों ?"

"जी जितनी आप कहें मार दें...अब बिना मारे कहां काम चलता है सर...।"

"ठीक है अपना हिसाब भी सैक्रेट्री को दे दो...कल ए. डी. सी. साहब ने बुलाया है...उनकी लड़की की शादी भी है । ब्लॉक की प्रोग्रेस भी बतानी है जितनी सबसिडी रिलीज की है उसकी सिकस्टी परसेंट क्लैक्शन जरूर होनी चाहिए । शादी है...टारगेट पूरा न हुआ तो...," बी. डी. ओ. साहब ने संशय मिश्रित बात कही ।

"अरे भई वो कपूर को इनवाईट नहीं किया इस प्रोग्राम में ?" डाक्टर साहब ने पूछा ।

"किया तो था पर वे जरा अकड़ू किस्म का है सर । उसे हमारे टारगेट से कुछ लेना-देना नहीं । निरा सूफी है...न पीता है न पिलाता है । एक बार तो मैंने कहा था कि भई भले ही न पियो पर पिलाओ तो सही," पंचायत अधिकारी ने बताया ।

"अगर ऐसा मैनेजर भर्ती करेगा बैंक, तो चल लिया काम...हर बात में मीन मेख...राम स्वरूप गया होगा कहीं बैंक में, हमने उसका केस सपांसर करके भेजा था तो कपूर साहब कहने लगे, "आपने भैंस-वैस तो रखनी नहीं फिर लोन काहे का," सरपंच ने शिकायत की ।

"हां ! कल नंबरदार भी बता रहा था कि रामभज को वह कह रहा था कि वह कैसे अनुसूचित जाति का हो गया," पशुचिकित्सक बोले ।

"अब सर ये देखना तो हमारा काम है कि कौन क्या है...सर्टिफिकेट हम दे रहे हैं कि किसकी कितनी आय है, कौन किस जाति का है...दिल उसका जला जा रहा है । शिब्बू को उसने यही टोका था कि तेरी आमदनी तो बीस हजार से भी ज्यादा है फार्म पर पैंतीस सौ कैसे लिखी है ? " सरपंच पुनः बोला ।

"ऐसे ही वह भैंस के केसों के बारे में कह रहा था । अब जब हमारे

डाक्टर साहब भैंस की राजी खुशी ग्रौर जिन्दा होने का प्रमाण पत्र दे रहे हैं ग्रौर सरदार साहब बीमा कर रहे हैं तो भैंस कोई लेता है या नहीं इससे उस हरिशचन्द्र को क्या फर्क पड़ता है ?

"भई उसे भी टुकड़ा फेंक दिया करो···तुम सब ग्रकेले-ग्रकेले मजा लेना चाहते हो···क्यू डाक्टर साहब ? तुम्हारी उस झुनझुनवाला का क्या हाल है···चल रहा हैं ? खंड विकास ग्रधिकारी बोले ।

"ग्रजी हम तो सब कुछ हाजिर कर दें, कपूर साहब इशारा तो करें जरा," डाक्टर ने गिलास खाली करते हुए कहा ।

"सर ग्राप इस कपूर का कुछ कर के ग्रायें कल । ए. डी. सी. साहब को साफ-साफ बता दें कि यह कपूर न काम कर रहा है न करने दे रहा है ···ग्रौर टारगेट तो पूरे हो जाँयेंगे पर इस टारगेट का कुछ करना ही पड़ेगा ।

"सैक्रैटी भई हमारी गरीबी भी दूर करो । कल साहब के पास जाना है ···बिटिया रानी की शादी है । जल्दी हिसाब निपटाग्रो ।

"सर···ग्रभी टारगेट काफी पीछे है ।"

"ठीक है ग्रगले हफ्ते पूरा हो जाएगा ।"

ग्रामीण विकास का दौर रात भर चला । मिस झुनझुनवाला ने देर रात गए ग्राकर दौर को ग्रौर रंगीन बना दिया ।

इक्कीस मार्च निकट ग्रा रहा था । कपूर साहब ग्रपनी टेबल पर फाईलों में उलझे हुए थे । ऋण के लक्ष्यों में वे काफी पीछे थे । जमा राशि का टारगेट उन्होंने सफलता पूर्वक पूरा कर लिया था ।

बैंक का चपरासी डाक ले ग्राया । मुख्य कार्यालय की डाक उन्होंने ग्रादतन सबसे पहले खोली । उसमें केवल एक ही पत्र था ।

ग्रगले दिन बैंक के सभी कर्मचारियों ने उन्हें भाव भीनी विदायी पार्टी दी ।

माडू राम स्कूल के ग्रागे फिर बच्चों में उलझ गया । □

ज़रूरत

नये प्रॉडक्ट की, सेल कैम्पेन का नेट वर्क तैयार कर वह सवा पांच बजे घर लौट आया। निधि भी बैंक से इसी समय लौटती है।

आते ही दोनों ने डाक देखी वैडिंग एनीवर्सरी का कार्ड दिनेश ने भेजा था।

"अच्छा हुआ दिनेश ने याद करा दिया। तीन दिन ही तो रह गये हैं," निधि किचन की ओर जाती बोली।

"दूसरा इनलैंड किसका है ? किचन में चाय चढ़ाते उसने नरेन्द्र से पूछा।

"डैडी का," उसने उत्तर दिया।

"किसका ?," वह जोर से चिल्लाई, "देवेन्द्र का।"

"नहीं डैडी का," कहते-कहते नरेन्द्र भी किचन में आ गया।

"क्या लिखा है ? पैसे मंगवाये हैं फिर क्या ?"

"नहीं।"

"तो आपकी माता जी का रोना रोया होगा।"

हां ! मम्मी के पेट में दर्द है। लिखा है पी. जी. आई. में पूरा चैक-अप करवा दें।"

"अब उम्र है तो दर्द-बर्द तो रहेगा ही। बैठे-बैठे दर्द नहीं होगा तो क्या होगा।"

"हां, कहीं प्राब्लम बढ़ गयी तो मुश्किल हो जायेगी।"

"पी. जी. आई. तो ऐसे लिखा है जैसे सारे डाक्टर हमारे वाकिफ़ हैं। कई हफ्ते चाहिए वहां चक्कर काटने को। एक दिन में तो ब्लड टैस्ट ही होगा. फिर अगले हफ्ते की डेट दी जाएगी एक्स रे को, ई. सी. जी, ओ. सी. जी और न जाने कितने टैस्ट···फिर हर जगह लाईन लगाओ।"

"हूंह बात तो सही है। कभी डाक्टर समय पर नहीं आए तो कभी रिपोर्ट मिलने में देर।"

पिछली बार शन्नो की ननद आई थी···हस्पताल में कमरा नहीं मिला था। न जाने किस-किस के तरले करने पड़े थे। उन्हीं दिनों डाक्टरों ने हड़-ताल कर दी थी। आप्रेशन महीना भर और पोस्टपोन हो गया। उसकी ननद न घर की रही न हस्पताल की। पूरी फैमली का एक पैर घर में तो दूसरा हस्पताल में होता था। और ऊपर से सभी रिश्तेदार शनिवार इतवार या जिस दिन भी मौका लगता ननद को देखने चल पड़ते। शन्नों के घर की हालत पन्द्रह दिन में ही खराब हो गयी थी। घर नहीं धर्मशाला बन गयी थी। ऊपर से बेचारी आफिस पहुंचती तो काम गलत हो जाने पर डांट खाती अलग से। छुट्टी भी लेती तो कितनी ?

"अब मैं भी क्या करूं ? इधर सेल कैम्पेन में जरा सी ढील हुई तो मुश्किल हो जायेगी। परसों मीटिंग थी सारे 'रैप्स' की। मेरी एबिलिटी देखते हुए आर. एम. ने मुझे स्पेशियली यहां का कैम्पेन दिया है। कम्पनी की रेपुटेशन का सवाल है। मार्किट में कितना कंपीटीशन है, तुम नहीं जानती, आज ही टी. वी. पर नया सीरियल शुरु होने जा रहा है। हमारे प्रॉडक्ट को इंट्रोडयूस किया जा रहा है। कम्पनी ने सारा सीरियल स्पांसर किया है।"

"अब कौन समझाये उन्हें कि यहां दो-दो जने रात-दिन जान मार कर कमाते हैं तो भी कुछ नहीं बचता। ऊपर से मेरी नौकरी ऐसी है कि आज चंड़ीगढ़ तो कल बम्बई में मीटिंग अटेंड करो तो परसों हिमाचल कवर करो।"

"कल का क्या प्रोग्राम है ?"

"कल कैम्पेन लांच करना है। सारे पेपर्ज में फुल पेज़ एड आ रहा है। यदि मार्किट में प्रॉडक्ट डिसप्ले न हुआ तो डीलर नाराज हो जायेंगे। पूरे

शहर में जाकर देखना है। तुम्हारी 'वो' सुमन भी सेल्स गर्ल के कंट्रेक्ट के लिए आई थी। उसे 19 सैक्टर अलॉट कर दिया है। डोर टू डोर सर्विस के लिए। है बड़ी इंटैलिजेंट। कनविंसिग पावर बहुत जबरदस्त है।

"मेरे यहां भी क्लोजिंग वर्क चल रहा है। बहुत काम है। बैंक से लेट आया करूंगी थोड़ा सा। इसके बाद एल. टी. सी. लेकर गोवा हो आएंगे। तुम भी कोई टूर बना लो उस साईड। अभी बच्चों का झंझट नहीं है। ठीक से घूम-घाम कर एंज्वाय कर लेंगे। फिर निकलना मुश्किल है।"

"पर माता जी।"

"माता जी का तुम जानो...मेरा एल. टी. सी. लैप्स हो रहा है...तुम नहीं जा सकते तो मैं अपनी क्लीग्ज के साथ कंडक्टिड ट्रिप में ही चली जाऊंगी।"

"माता जी को दिखाना भी जरूरी है...कहीं कुछ हो गया तो ?"

"माता जी का ठेका क्या तुमने ही ले रखा है ? जो उनके साथ रहते हैं क्या उनका कोई फर्ज नहीं बनता ? पैंतीस पैसे का एक लिफाफा लिख दिया और अपनी बला हमारे सिर। जब मेरे दर्द उठा था तब तो माता जी ने नहीं सोचा कि उनकी भी कोई बहू है चलो उसे भी आराम मिले। तब तो दिल्ली से मेरे मम्मी-डैडी ही आए थे।"

"वो सब ठीक है पर...।"

"पर क्या जब सुख में माता जी आराम देती रही तो ठीक रहा अब बीमार हैं तो हम याद आ गए। अभी तक तो कोई राजी खुशी की एक चिट्ठी तक नही आती थी।"

"छोड़ो भी हम बहसबाजी में पड़ गये। इस सीरियल को देखने के बाद बात करेंगे।

"आज कौन सी कैसेट लाए हो ?"

"लेटेस्ट रिलीज है।"

"चलो सीरियल के बाद लगा देना।"

"इस सीरियल में भी दो सासों का झगड़ा है। कितने सुखी हैं वे जिनकी

सासें नहीं हैं । इसमें भी तो सास और समधिनों का टकराव है ।"

"ये तो सीरियल हैं । पर तुम्हारी मम्मी तो आरिजनल हैं...इन सासों का झगड़ा तो 13 एपीसोडज के बाद निपट जायेगा पर उनके तो अभी न जाने कितने धारावाहिक बकाया हैं । पिछली बार आईं थीं तो नाक में दम हो गया था ।"

"क्यूं तुम्हें तो बहुत प्यार करती हैं ।"

"ख्वाह करती हैं । नीटू की मम्मी बता रही थीं उनके उदगार । उसके बाद तो मेरा मन ही खट्टा हो गया । फिर समय कहां है इतना कि हस्पताल दौड़ें ?"

"कैसेट लगा दूं ?"

"हां ।"

"वर्मा के यहां बर्थ डे पार्टी है...क्या देना है ?"

"देना-लेना तुम जानो...मैं अटेंड नहीं कर पाऊंगा ।"

"इधर बजट का बड़ा टाईट चल रहा है । इनकम टैक्स के लिए भी कुछ प्राविजन करना है । कमबख्त जो पैसा बना रहे हैं वो बिना टैक्स दिये मजे कर रहे हैं । इधर मंहगाई से डी. ए. बढ़ा तो इनकम टैक्स के थ्रू फिर सरकार को लौट गया ।"

"इस बार मुझे भी कम से कम दस हजार के एन. एस. सी. खरीदनें पड़ेंगे तो काम चलेगा वरना...।"

"एल. आई. पालिसी ले लेते हैं ।"

"मैं सोच रहा हूं इसे तलाक दे दूं"

"अच्छा...?' "दे दो ।"

"तुम्हें नहीं कम्पनी को । एक और कर्न्सन के एम. डी. से महफिल में मुलाकात हुई थी कान्फ्रेंस में । वो अच्छा राईज देने को तैयार हैं और एरिया सेल्ज मैनेजर भी बना देंगे । मेरी प्रोफारमेंस से बहुत इंप्रैस हुए थे । साऊथ बेस्ड हैं । हम चंडीगढ़ के चंडीगढ़ में रहेंगे । बजट भी ठीक हो जाएगा ।"

"फिर अकामोडेशन ?"

"कम्पनी की तरफ से नया बंगला।"

"और क्या पर्क्स हैं ?"

"कन्वेयेंस है, टूरिंग में भी अच्छा बन जाएगा...फिर माता जी को...।"

"ओफ ओ...माता जी को तुम न छोड़ना...अभी कंपनी छोड़ी नहीं है माता जी का रोना पहले...।"

"लगता है फिल्म का प्रिंट अच्छा नहीं है, डुप्लीकेट कैसेट है। आजकल सभी लायब्रेरियां यही करती हैं।"

फिल्म समाप्त होने पर नरेन्द्र और निधि सो गये।

कुछ वर्षों बाद—

"कल विक्की के स्कूल का एक ट्रिप सिंगापुर जा रहा है। भेज दूं ?"

"मैंनें कब मना किया है...भेज दो।"

"नीथि कंप्यूटर कोर्स ज्वाइन करना चाहती है। क्या ख्याल है ?"

"जैसा तुम ठीक समझो। उसकी मर्जी है। स्कोप अच्छा है।"

"कल डाक्टर शर्मा से चैकअप करवा लूं। बड़ा एग्जासस्ट फील करती हूं, बी. पी. लो चल रहा है। अब घर का काम मेरे बस का नहीं। काम वाली कोई नहीं मिल रही।"

"हां! विक्की और नीथि के फ्रैंडज़ भी आने लगे हैं। चाय वगैरा के लिए कोई सर्वेंट जरूर होना चाहिए।

"हम सब दिन में घर से बाहर रहते हैं। पीछे से घर में देख भाल के लिए कोई न कोई चाहिए।"

"आज पेपर में भी पढ़ा था कि चोरी की वारदातें बढ़ गयी हैं। सर्विंग कपल्ज इसके अधिक शिकार बने हैं। ये लोग मारूती कारों में आते हैं। फिर इस शहर में तो पड़ोसी भी पड़ोसी को जानने की कोशिश नहीं करता। सब समझते हैं गैस्ट होंगे। एक जगह तो ये मर्डर ही कर गये।"

"हुं, लॉ एण्ड आर्डर तो सारी जगह बिगड़ रहा है...कल न्यूज़ में देखा था, कोई भी देश बचा नही है इस बीमारी से।"

"कोई नौकरानी ढूंढ़ते हैं। पेपर में एड दे देते हैं।"

"पांच से कम थोड़े ही पड़ेगी वह। फुल टाइम नौकरानी हजार से कम नहीं पड़ेगी कुल मिलाकर।"

"एफोर्ड कर लेंगें ?...चोरी चकारी, हाथ की सफाई अलग से। फिर उसकी रखवाली की चिन्ता अलग से।"

"तुम्हारी तो चार इन्क्रीमेंट लग जायें तो भी उसका खर्चा कम्पनसेट न हो।"

"फिर क्या किया जाए ?"

"तुम्हारी मम्मी का लैटर आए बड़े दिन हो गए ?"

"क्यूं ? वे ठीक-ठाक हैं। जरा आंख से कम दिखता है।"

"दर्द वर्द का क्या हाल है ?"

"छोटा-मोटा तो होगा ही।"

"और पापा जी ?"

"वर्मा गया था। बता रहा था पापा जी की आंखों में मोतिया उतर आया है। आप्रेशन जल्दी करवा दिया जाना चाहिए।"

"हूं। इस उम्र में उनकी सेवा अवश्य होनी चाहिए। अब हमें भी तो उनके साथ रहने का मौका मिलना चाहिए।"

"तुम क्या चाहती हो ?"

"मैं काफी दिनों से सोच रही थी कि माता जी को अपने पास बुला ले।"

"अच्छा।"

"अब कोई मिल भी तो नहीं रहा है घर का काम संभालने को। सर्वेंट पर मुझे भरोसा नहीं रह गया। माता जी और पापा आ जाएंगे तो ठीक रहेगा, बच्चों का भी दिल लग जाएगा। बेचारों ने बचपन से दादा दादी का प्यार भी नहीं देखा।"

"कहां चले ?"

"पापा जी को तार देने।"

"क्या लिखोगे ?"

"मैटर टेलीग्राफ आफिस में जाकर बना लूंगा।"

□

काँच्छी

चेहरे पर नाक के नाम पर दो छेद, मटर की फलियों जैसी ग्रांखें, पाव रोटी की तरह फूले गाल, ठिगनी टांगों को घुटनों तक ढके एक फटी शाल, नन्हें हाथों में एक गठरी, बेतरतीव बाल ग्रौर बालों के नीचे ढके कानों में पीतल की दो छोटी-छोटी बालियां···बस यही थी कांच्छी।

''ग्राप कितने दिनों से एक कामवाली की तलाश में थे···लीजिये भाभी जी···ग्रापके लिए एक लड़की लाया हूं,'' कहते हुए क्वार्टर मास्टर शर्मा भीतर ग्रा गये।

''बैठिए भाई साहब चाय बनाती हूं,''कह कर मैं किचन में ग्रा गई।

दस बारह साल की लड़की फर्श पर बैठ गई। सहमी हुई। ग्रपनी गोल-गोल ग्रांखों से वह कमरे का जायजा ले रही थी।

''बड़ी मुश्किल से मिली है भाभी जी यह। इसका बाप पोस्टिंग जा रहा है खेमकरन में···फैमिली स्टेशन तो है नहीं। इसकी मां कई साल पहले गुजर चुकी है। मेरे ग्रंडर काम करता है। ग्राज जब वारंट काट रहा था तो उसने ग्रपनी समस्या बताई। मैंने उसे सजैस्ट किया कि उसकी लड़की हमारे यहां बिल्कुल लड़की की तरह रहेगी। ग्रौर उस गरीब का भी भला ग्रौर ग्राप का भी काम चल जाएगा। ग्रब संभालो इसे,'' चाय खाली करते ही वह उठ गये।

''बैठिये तो सही भाई साहब···इसका नाम वगैरा क्या है···क्या तय

किया है ?"

"आप इसे रखें तो सही···जो आप देंगी इसका बाप सहर्ष स्वीकार कर लेगा। तीन साल उसकी यूनिट बार्डर पर रहेगी। अभी मैं चलता हूं। गेम्ज का टाईम हो गया है। भाई साहब का खत आया कोई ?"

"हां आया था···ठीक-ठाक हैं अभी ट्रांस्फर का कोई पक्का नहीं।"

"कोई बात नहीं ऊपर वाला चाहेगा, जल्दी बदली हो जायेगी···अब तो आप का हाथ बटाने के लिए एक लड़की मिल ही गई है।"

"शुक्रिया भाई साहब!"

"अच्छा फिर चक्कर लगाऊंगा", कहकर वे चले गये।

काँच्छी गोरखाली भाषा में एक लड़की को कहा जाता है। लेकिन इस छावनी में कांच्छा एक नौकर का पर्याय बन गया था।

गठिया के कारण मुझ से उठा बैठा नहीं जाता था और फिर बाजार जाने के लिए चढ़ाई-उतराई में जाना और भी कठिन लगता था।

"काँच्छी तिमरो के नाम हो ?" मैंने उसकी भाषा में पूछा।

गर्दन नीचे झुका कर वह मुझे देखती रही और मुस्कुराती रही। तीसरी बार पूछने पर आहिस्ता से बोली "धन देवी।"

"दाजू कहां है।"

"गया।"

"आमा ?"

आमा का नाम सुनते ही उसका खिला चेहरा मुरझा गया।

"कोई बात नहीं···आमी तुम्हारा आमा हो," कहकर उसे आश्वस्त किया।

स्कूल से राजू, शिल्पी और गुड्डू आ गए। जब उन्हें काँच्छी का पता चला तो शिल्पी बहुत खुश हुई। उसकी हम उम्र मिल गई थी।

बच्चों के स्कूल जाने के बाद 'इनके' पीछे मुझे बाजार से सामान लाने में बहुत मुश्किल होती थी। इसलिए किसी भी नौकर या नौकरानी का जबरदस्त अभाव इनकी बदली के बाद मैं अनुभव कर रही थी।

तापमान चार डिग्री से नीचे सरक रहा था आकाश पर बर्फानी बादल तैर रहे थे। हल्की-हल्की बूंदे पड़नी आरम्भ हो गयी थीं। छत पर कोयले के चूरे और मिट्टी से बने गोले सूख चुके थे। काँच्छी का काम बिना किसी रस्मी परिचय के छत से गोले उतारने से ही आरम्भ हो गया। शिल्पी उसकी सहायता के लिए सीढ़ी लगा कर छत पर चढ़ गई।

"बीबी जी बरफ पड़ेगा···हमारे गांव में भी ढेर बरफ पड़ता," काँच्छी गोले उठाए, आसमान की ओर देखते उतर रही थी।

"कौन सा गांव है तुम्हारा ?"

"नेपाल ।"

"गांव कौन सा है ?"

"नेपाल ।"

शायद इससे अधिक उसे मालूम भी न था। जब वह बोलती तो हंसती जरूर। हर वाक्य के साथ एक खिलखिलाहट जुड़ी रहती। बीच-बीच में उसकी आंखें यन्त्रवत बंद होतीं और खुलतीं।

गोलों के कारण उसके हाथों को काले होते देख शिल्पी ने राहत की सांस ली। मुझ से तो सीढ़ियां चढ़ी नहीं जाती थी। सो सारा काम शिल्पी ही करती। गोले बनाना, छत पर कपड़े सुखाना, कोयले रखना, अंगीठी जलाना वगैरा-वगैरा।

उस रात उसका बिस्तर स्टोर में लगा दिया। हमें काफी सर्दी लग रही थी। बर्फ के फाहे पड़ने शुरू हो गये थे। काँच्छी ने अंगीठी की राख झाड़ कर नये गोले डाल दिये जिससे कमरे में गर्मी आ गयी।

उसका बचपन भी किसी पहाड़ पर बीता था इसलिए वह सर्दी की अभ्यस्त थी जिसके अभ्यस्त हम इस छावनी में आकर पांच वर्ष तक भी नहीं हो सके थे।

गुडडू काँच्छी को धन्नो कह कर बुलाती थी। उसे इस नाम से पुकार के बड़ा मजा आता। कहती ममी इसके मुंह पर यही नाम 'फिटता' है। काँच्छी बोलने में बड़ी 'मुश्कैल्टी' होती है।

गुड्डू की बातों पर वह भी हंसती भले ही उसके पल्ले पूरी बात न पड़ती।

शिल्पी ने उसे निजि सचिव बना लिया था। स्कूल जाती तो बस्ता उसके ऊपर लाद कर ले जाती। वापिस लौटती तो उससे खेलती।

गुड्डू अपनी यूनीफार्म उतारती तो कांच्छी उसे हैंगर में टांगती। उसके बूट पालिश करती। शायद ये आदेश गुड्डू ने उसे दे रखे थे क्यूंकि उसके ये काम पहले शिल्पी को बड़ी बहन होने के नाते करने पड़ते। गुड्डू केवल पत्रिकायें पढ़ने और होमवर्क करनें में ही व्यस्त रहती। घर के काम से उसे कुछ लेना देना नहीं था।

थोड़ी-थोड़ी देर बाद आवाज देती "धन्नो मेरी पेंसिल शार्प कर दे... धन्नो मेरा बस्ता ले आ...।"

कांच्छी भी धन्नो बनकर उसके आदेशों का पालन करती।

कुछ ही दिनों में हमारी काँच्छी पूरी लाईन में सर्वप्रिय हो गई।

कई बार मिसेज शर्मा फरमाईश कर देती, "बहन जी...आज हमारे मेहमान आ रहे हैं, जरा काँच्छी को भेज देना।"

यह जानते हुए भी कि वे काँच्छी का कचूमर निकाल देंगी, मुझे उसे भेजना पड़ता। वरना उनका मुंह टेढ़ा हो जाता। और ज्यादा डर तो भाई साहब का था क्यूंकि धन देवी को ढूंढ़कर भी तो वही लाये थे। उनके इस एहसान की कीमत यह बेचारी बच्ची उतार रही थी।

पड़ोस में कभी शादी ब्याह होता तो लोग धन देवी की डिमांड ऐसे करते मानो वह लड़की न होकर वाशिंग मशीन या डिश वाशर हो।

कैप्टेन साहब का अर्दली जब काफी देर तक बाजार से नहीं लौटता तो उनकी धर्मपत्नी काँच्छी को छोटे-मोटे काम के लिए बुला लेती।

आर्मी में यह सब कुछ सहना पड़ता है नहीं तो इसका परिणाम पतियों को भुगतना पड़ता है जैसे 'ये' भुगत रहे हैं।

काँच्छी थी कि दौड़-दौड़ कर गेंद की तरह इस घर से उस घर लुढ़कती रहती। शायद कई बार वह मना भी करना चाहती होगी। आखिर वह भी तो किसी की बेटी है। इसलिए मैं बहुत से काम स्वयं कर लेती थी और

सिर्फ बाहर के काम ही अधिकतर उससे करवाती। लेकिन बाहर का काम करवाने के कारण वह बेचारी 'कामन सर्वेंट' हो गयी थी।

बर्फ पड़ जाने से बच्चे रजाई में दुबक जाते और मील भर दूर बाजार जाने से हिचिकचाते। बेचारी धन देवी की शामत आ जाती। वह खराब मौसम में भी दौड़ती और हम रजाई में दुबके अंगीठी सेंक रहे होते।

इनके ट्रांस्फर हो जाने के बाद राजू की ड्यूटी थी सुबह अंगीठी सुलगाने और हमाम जलाने की। जो अब काँच्छी की कार्य सूची में शामिल हो गया था।

एक दिन इस लड़की ने मुझे बैड टी दी तो बड़ा अच्छा लगा। चालीस पार करने तक मैं ही सुबह चाय बनाती थी। विवाह से पहले पापा को चाय मैं देती थी। विवाह के बाद इनकी भी आदत भी बैड टी की थी। क्यूंकि सुबह परेड पर जाना होता था। इसलिए बैड टी पीने का मजा ही और आया।

'बैड टी' शायद राजू को अपने डैडी की विरासत में मिली थी। अभी जनाव दसवीं में हुए हैं और बैड टी की तलव हो गयी है इन्हें।

शिल्पी के कपड़े उसे फिट बैठते थे। कुछेक कपड़े मैंने तिब्बतियों से लेकर उसे दे दिये थे। अब वह बिल्कुल हमारे परिवार के एक सदस्य सी लगती थी।

गुड्डू उसे पढ़ाने की कोशिश करती। जब उसे नहीं आता तो दो टिका भी देती जिसका उसने कभी बुरा नहीं माना क्यूंकि गुड्डू की आदत थी ही ऐसी।

इधर कुछ दिनों से मैं काँच्छी में कुछ परिवर्तन महसूस कर रही थी। उसका शरीर भरने लगा था। स्वभाव में चिड़चिड़ापन आने लगा था। पहले तो मैंने इसे काम का आधिक्य समझा था लेकिन उसके शरीर में एक प्राकृतिक परिवर्तन था। वह घबरायी हुई थी। धीरे-धीरे उसे मैंने समझाया तो वह समझ गई।

उधर राजू की भी मूंछे फूट रही थीं। वह भी कांच्छी में अधिक रुचि लेने लगा था। बैड टी के अलावा और भी काम उससे करवाने लगा था।

बच्चे क्या कर रहे हैं इसका मुझे हर पल ख्याल रहता था। इसलिए मुझे बैड टी बन्द करनी पड़ी।

रेजीमेंट में जब कोई नई फिलम आती तो हम सभी देखने जाते।

एक दिन काँच्छी बहुत खुश थी। कहने लगी "आमा···आज नेपाली फ़िल्म 'माईती घर' लगी है दिखा दो।"

मुझे तो प्रादेशिक फिल्मों में कोई दिलचस्पी नहीं है लेकिन उसका मन रखने के लिए मैंने उसे भेज दिया। बच्चे उसके साथ नहीं गये।

पिक्चर हाल में और भी नेपाली लोग फिल्म देखने आए थे।

फिलम से लौटने के बाद काँच्छी बहुत खुश थी। राजू उससे बार-बार फिल्म की स्टोरी के बारे में पूछ रहा था। माला सिन्हा किसे प्यार करती है वगैरा-वगैरा।

छावनी में दशहरा खूब धूम-धाम से मनाया जा रहा था। नेपाली देवी के उपासक हैं। सो दशहरे का कार्यक्रम दस दिन चलता है। दशहरे से एक दिन पूर्व 'काल रात्रि!' मनाई जाती है और भैंसे का एक ही वार में वध किया जाता है।

गोरखों का यह प्रमुख उत्सव होता है।

काँच्छी भी मन्दिर गई थी जौर उत्सव देख कर आई थी। बच्चों को बता रही थी कैसे झोटे का सिर एक ही वार में धड़ से अलग कर दिया जाता है।

इस उत्सव के बाद उसके मिलने वालों की संख्या में वृद्धि हो गई थी। कई परिवार उसे यदा-कदा हमारे क्वार्टर में ही मिलने आ जाते।

होली आ गई। धन देवी भी अपने मिलने वालों के यहां गुलाल लेकर चली गई।

ये भी होली के अवसर पर छुट्टी आये हुए थे। हम लोग होली मिलन के लिए एक दूसरे के घर जा रहे थे। नेपाली टोलियां 'होक्के होन्ना' गाते हुए बाजारों से गुजर रहीं थीं।

शाम को हम सब नहा धो कर तैयार थे। चेहरे पर कहीं-कहीं अबीर

की लाली चमक रही थी।

शाम हो गयी। धन देवी की प्रतीक्षा ग्रारम्भ हो गई।

हमें यह भी मालूम नहीं था कि उसके मिलने वाले कौन-कौन हैं।

रात के नौ बजने वाले थे।

काल बैल बजी। दरवाजा खोलने पर एक युवक खड़ा था सिर पर नेपाली टोपी, जिस पर खुखरी के दो छोटे-छोटे मॉडल टंके हुए, चूड़ीदार सफेद पायजामा, सफेद कुर्ता, माथे पर दही चावल का टीका।

पीछे धन देवी सिर झुकाये खड़ी थी। गले में हार पहने।

"हमारा शादी दशहरे वाले दिन पक्का हो गया था। ग्राज गुरुजी ने मन्दिर में शादी करा दिया। होली वाले दिन इसे शुभ माना जाता है। ग्राप ग्राशीर्वाद दीजिये।"

मुझे लगा मेरा गठिया दर्द करने लगा है।

□

निम्मो

उसकी दो ही पसंद हैं खाने में बिस्कुट और देखने में पत्नी। कालेज में यूं तो कितनी विद्यार्थिनें उसकी फैन हैं, और मिस किरण जैसी ब्यूटी क्वीन उस पर मरती है पर श्रीमती मल्होत्रा की बात ही और है।

संदीप मल्होत्रा का मन किसी पर नहीं डोलता। इसीलिए उसने मनीषा मल्होत्रा को कहीं सर्विस नहीं करने दी।

जब वह घर आए तो पहली अभिलाषा यही होती है कि मनीषा द्वार पर सजी-धजी मिले।

मनीषा के मायके जाने के बाद जब उसका पहला पत्र मिला तो उसे लगा उसके हाथों में पोस्ट कार्ड नहीं बल्कि उसकी उंगलिया हैं। हालांकि कार्ड में मात्र इसके कुछ नहीं लिखा था कि 'सेफ पहुंच गई हूं।'

तीसरे दिन ही उसे लगने लगा कि पत्नी को मायके भेज कर बड़ी भारी गलती कर बैठा है। पीरियड समाप्त हो जाने के बाद एक पल भी वह कालेज में नहीं रुकता था इसलिए प्रोफेसर मेहरा ने उसे टोक ही दिया, "मल्होत्रा क्या बात है आज लायब्रेरी में कैसे...?"

"डिबेट्स की तैयारी कर रहा हूं...नेक्स्ट वीक इंटर कॉलेज हो रहा है : युनीवर्सिटी में" कहकर बात बनानी पड़ी। अब चार पीरियड पढ़ा लेने के बाद सारा दिन मटियाले सागर की तरह दिखता है। दिल बहलाने को किरण जब वह कहे हाजिर हो सकती है पर वह यह सब कुछ नहीं करना चाहता।

प्रोफेसर सावल के छुट्टी चले जाने पर, यूथ फैस्टीवल में कालेज की

टीम ले जाने की जिम्मेवारी उसने स्वयं ले ली है ताकि घर लौटकर मनीषा की याद न आये।

घर पहुंचने से पहले वह मित्रों के आमंत्रण भुगता रहा है। डायरी निकाल कर उन सभी मिलने-जुलने वालों के पते नोट कर लिये जो कहते रहते थे "कभी मिसेज़ मल्होत्रा को भी साथ लेकर आयें।"

नगर में जितनी मूवीज लगी थीं वह देख चुका है। क्लीग्ज के वीडियोज पर कुछ गर्मा-गर्म देखने की तपस भी बुझा चुका है। परेड ग्राऊंड में लगे सीजनल मेले के चक्कर भी काट लिए हैं।

अखबार उठा कर टुडेज एंगेजमेंटस में देखता है। कहीं साईं बाबा, बहाई समाज, बाबा लाल दयाल, कीर्तन, सेमीनार, लेक्चर, वाद-विवाद प्रतियोगितायें यहां तक कि समय काटने की गर्ज़ से कार बाजार तक जा आता है। हालांकि इन बाबाओं, संतों-साधुओं, कीर्तन आदि से उसका दूर का नाता भी नहीं है, निरुद्देश्य घूमता है ताकि कमरे में आकर न्यूनतम समय ही व्यतीत करना पड़े।

कुछ पुस्तकें उसने लायब्रेरी से ली हैं। यूं तो बहुत बढ़िया साहित्य उसने पढ़ा है। हिन्दी में जयशंकर प्रसाद जैसे लेखकों से लेकर खलील जिब्रान तक। पिकासो, सोभासिंह की पेंटिंग्ज पर छपी पुस्तकों से लेकर कांगड़ा चित्रकला शैली में अश्लील चित्रण तक को देखा है।

लेकिन मनुष्य भीतर से अवश्य कमजोर होता है। कई बार हमेशा अच्छा देखने, करने, सोचने, निभाने, गाने, नाचने, खाने, पकाने, बोलने आदि से हटकर एक आम गन्दे आदमी की तरह बीहेव करने का दिल भी करता है।

जो लोग ऊपर से बड़े संयमी, चिन्तनशील ओहदे वाले, रुतबे वाले, स्टेटस वाले और न जाने क्या-क्या होते हैं, भीतर उनमें कोई न कोई कमजोरी अवश्य होती है। कई बार हम घर में वहीं कुछ स्वयं करते हैं जो दूसरे करें तो अच्छा नहीं लगता।

संदीप की मनोदशा भी कुछ ऐसी थी। प्रोफेसर होते हुए उसकी एक पोजिशन है एक इमेज है जो इसके ग्रारबिट में बनी हुई है।

एक ग्रनुशासन में रहते-रहते वह तंग ग्रा गया है। पत्नी को एक हफ्ता ही गुजरा है। पर ग्रव्यवस्थित ग्रनुभव कर रहा है।

उन उपन्यासों को भी पढ़ डाला जो कभी सपने में भी नहीं सोचे थे ग्रौर कभी-कभी पुलिस ग्रपने छात्रों के दौरान जब्त कर लेती है। वे फिल्में देखीं जिन्हें ऊपर से गलत करार दिया जाता है पर ग्राज समाज का हर वर्ग देखे बिना नहीं रह पाता।

कई बार सेन्टीमेंटल जर्नी में उन फिल्मों का नायक बन जाता है जिनकी नायिकाएं मनीषा या किरण होती हैं फिर कुछ क्षणों के लिए स्वयं को हल्का महसूस करने लगता है।

मनीषा के पिता को या मनीषा को पत्र लिखकर जल्दी बुलाने से उस नकाब की रक्षा भी नहीं हो पाएगी जिस पर एक बुद्धिजीवी होने का चित्र चिपका है।

सबसे ग्रधिक मुश्किल होती है। सनडे को। वह वैड पर पड़ा है। टी वी चल रहा है। खिड़की से ग्रा रही हवा से दीवार पर लटका कैलेंडर चमगादड़ की तरह फड़फड़ा रहा है।

उसकी ग्राँखें महीने के खावे में लाल स्याही में छपी तारीखों पर टिकी हैं। उनके उड़ने पर निगाह भी उड़ी जा रही है। इस लाल डेट्स से घबराहट होती है।

वह गिन रहा है। मनीषा को गए पूरे दस दिन हो गये हैं। वह एक दो तीन चार गिनते-गिनते उसकी वापिसी के दिन गिनता है।

सुबह लिये तीन ग्रखबार खत्म हो चुके हैं। ग्रौर ब्रैकफास्ट भी। 'चलो मालिश ही कर ली जाए काफी समय हो गया है' सोच कर वह दो-चार हाथ बदन पर मारता है। नहाने के बाद फिर बिस्तर पर फैल जाता है।

वातावरण बदलने बालकनी में ग्रा जाता है। रीतू की मम्मी रोजाना की तरह पेटीकोट ब्लाऊज में ही घूम रही है। गली के नुक्कड़ वाले मकान का

पिछला हिस्सा साफ नजर आता है जहां कोई रहती है। जानता नहीं कौन है बस ठीक लगती है।

मिसेज जलोटा की सोफे की पीठ से लटकी केवल केश राशि हो नजर आ रही है। गली में चहल-पहल बढ़ गई है। इतवार को सभी के पति घर में हैं। इधर पति जी तो हैं पर मनीषा नदारद है।

अन्दर आकर वह कान खुजलाता है। दो एक उंगलियां तोड़ी। किचन में जाकर बिस्कुट का नया पैकेट खोला और दो-चार मिनट में साफ कर गया। टी. वी. पर कार्यक्रमों की रूप-रेखा बताई जा रही है। दोपहर एक असमिया फिलम आनी है। फिलम के नारी पात्रों को सुनकर उसे अचानक याद आया···आज तो काम वाली ने भी आना हैं।

उसकी एकरसता में कुछ रस भरा। मनीषा ने उसे लगाया है। देखने में लगती नहीं कि वह इस लायक हो कि घर-घर झाड़ू पोछे लगाये।

निम्मो को उसने केवल एक इतवार के दिन जरा सा देखा था। बाकी दिन जब वह आती है तो वह कालेज में होता है। कई बार इतवार को छुट्टी कर जाती है।

निम्मो को देखकर उसे एक घटना याद आ गई। उसके गाँव में एक सभा हो रही थी। तभी वहाँ झगड़ा हो गया। दूले के लड़के ने डाँग उठा ली थी। जाटों के सामने मजहबियों की इतनीं हिम्मत नहीं हो सकती थी। तभी सरपंच के लड़के ने दुले के लड़के को पीटना शुरू कर दिया। तो एक बुजुर्ग ने बीच बचाव करते हुए कहा था, "छडड दे सुक्खे...एस दे विच जाट दे खून ने उबाला मार लया है...छडड दे एह अपने विचों ही किसे दा खून है।"

निम्मो का चेहरा मोहरा भी खानदानी नहीं लगता है। गोरा रंग, लंबा कद, तीखे नैन नक्श कुछ कर डालने की लालसा। मनीषा जैसे उसका बखान करती थी लगता था वह उस खानदान का पौधा नहीं थी। सोचने-विचारने बात करने का ढंग ही इस बिरादरी से सर्वथा भिन्न था।

निम्मो ने घंटी बजाई और जरा सा शर्माकर अन्दर आ गई। साफ

सफाई की ओर जाते समय पूछने लगी, "बीबी जी कब आ रही हैं ?"

बीबी जी शब्द सुनते ही उसका शरीर कहीं से गीला होने लगा। निम्मो ही बीबी जी लगने लगी। इस ख्याल से निपटते ही उसने उत्तर दिया, "परसों आ जायेंगी। किचन मैं खुला छोड़ जाऊंगा···सफाई कर जाना।"

'जी अच्छा" कहकर निम्मो सीढ़ियां उतर गई।

तीन दिन काटने उसे बहुत मुश्किल लग रहे थे। कालेज में पेपर न चल-रहे होते तो वह स्वयं जाकर मनीषा को ले आता। रात को जब घर लौटता तो निम्मो और मनीषा उसे कमरे में खड़ी मिलती।

दो दिन जैसे तैसे इधर-उधर कट गये। तीसरे दिन उसकी ड्यूटी ईवनिंग शिफ्ट में थी। इसलिए वह घर पर ही रहा और मनीषा ने भी सुबह सुबह आ जाना था।

सुबह आज वह जल्दी ही उठ गया है। बेतरतीब पड़े सामान को करीने से सजाने में व्यस्त है। बार-बार बाल्कनी से गली की ओर झांक रहा है। अन्दर आकर कलेंडर देखता है। पूरे तेरह दिन हो गए हैं। "तेरहवें के बाद तो वैसे भी नहीं रुकते। आज मनीषा हर हालत में पहुंच जायेगी" सोच-सोच वह घड़ी की सुईयों के साथ-साथ घूम रहा है।

विविध भारती से गाने समाप्त हो चुके हैं। ट्रांजिस्टर बन्द कर देता है।

"दिल्ली वाली बस, दस तक तो पहुंच ही जाती है।"

आज कोई बन्द-बन्द तो नहीं ?"···इसी अशंका में वह अखबार खोलता है।

"मारे गये···पंजाब में हुई हत्याओं की घटनाओं के रोष में दिल्ली बन्द···।"

"जिस राज्य में हत्यायें हुई हैं वहां सब ठीक-ठाक है", उसे अखबार और बन्द-आयजकों पर गुस्सा आया।

किचन में किसी के आने की आहट हुई है। शायद निम्मो आ गई है।

"बीबी जी नहीं पहुंची प्रोफैसर साहब ?" निम्मो ने किचन से ही आवाज लगाई।

"आता हूं···।"

और किचन का दरवाजा अन्दर से उसने बन्द कर लिया।

□

बदलाव

इतनी लंबी पहाड़ी यात्रा के बाद वह थकान महसूस कर रहा था। लेकिन ऐसे स्थान पर पुनः जाने की कल्पना ही सुखद लगती है जहां बचपन बीती हो और यौवन की दहलीज पर पैर रखा हो।

वह तो सचमुच अपने जन्म स्थान पर ही जा रहा था जहां कभी उसके पिता ने अपनी सर्विस का काफी बड़ा हिस्सा बिताया था। जिस दिन पापा जी का ट्रांसफर के आर्डर आये थे वह बहुत रोया था।

पापा जी ने उसे समझाया था कि बेटा नौकरी तो नौकरी है। तुझे देहरादून में मिलिट्री स्कूल में डाल देंगे। और दो साल बाद तो कालेज ही जाना है। लेकिन वहां डाली, पप्पू, डब्बू थोड़े ही होंगे उसने सोचा था और सचमुच बीस वर्षों तक उसे कोई डाली, पप्पू या डब्बू जैसा नहीं मिला।

कितना खेला करते थे स्कूल से आने के बाद। वह तो पोस्ट आफिस के पिछवाड़े बने क्वार्टरों में ही डाली के घर सो जाया करता था कई बार।

उसे लगा उसका बचपन लौट आएगा। संयोगवश पापा के गुजर जाने के बाद विभाग ने उसे उनकी जगह स्थान दे दिया था। और यह भी संयोग ही था कि एक दो डाकखानों में काम करने के बाद उसे वही स्टेशन मिल गया जहां पापा जी बैठा करते थे। वही सीट मिलेगी उसे जिसके गिर्द आफिस टाईम में भी वह पापा जी के पास आकर होम वर्क़ करना शुरू कर देता था।

बस उतराई उतर कर बस स्टैंड पर खड़ी हो गई। उतरने ही उसने इधर उधर आंखें घुमाई। शायद कोई परिचित नजर आ जाए।

काफी सामान को देखकर एक कुली की आवाज आई, "बाबू समान कित्थे छडणा ?"

पुराने कुली को देखकर उसे अच्छा लगा। "मौजी राम ही है न तू ?"

"हां बाबू जी...मैं ई मौजी," कुली ने पीठ पर ट्रंक लदे ट्रंक को रस्सी से कसते हुए कहा।

"डाकखाने चल" एक ब्रीफ केस हाथ में उठाए वह भी पीछे-पीछे हो लिया।

पांच मिनट में ही नाला पार कर वह डाकखाने के समीप पहुंच गया। पत्थरों से बनी दीवार और उस पर काफी ऊंची लाल छत वैसी ही थी। हां अन्दर से डाकखाने का लेआऊट बदल गया था। स्टाफ बढ़ गया था। डाक के थैले बढ़ गए। कर्मचारी नव निर्मित सनमाईका के कांऊटर पर बैठे थे।

उसके पापा जी की सीट और पीछे खिसक गई थी। जहां उसे बैठना होगा। घड़ी वही है पर वक्त की पूरी पाबंद, ठीक पोस्टमैन ठाकुर दास की तरह। ठाकुर दास रिटायर होकर गांव में ही खेती बाड़ी कर रहा है। पूरा शहर जानता था कि घड़ी लेट हो सकती है...ठाकुर नहीं। फिर वह स्वयं एक डायरेक्ट्री था। शक्ल देखते ही मोटे बंडल से उसकी डाक निकाल कर खुशी-खुशी रास्ते में ही पकड़ा देता। जब उसने नौकरी शुरू की थी तो कोई अंग्रेज पोस्टमास्टर था।

डाकखाने की औपचारिकतायें पूरी करने के पश्चात वह पुराने पोस्ट मास्टर के क्वार्टर में आ गया। उसका बचपन इन्हीं कमरों में बीता है।

"भाटिया साहब ! आपने रेजिडेंस बड़ा सजा रखा है," ड्राइंग रूम को देखते हुए वह बोला, "यहां मैं सोया करता था। इधर एक टेबल पर किताबें रखता था और इस तरफ चारपाई।"

ट्रांसफर हुए पोस्टमास्टर का मन बुझा हुआ था। जिस स्थान पर रह लो

उसे छोड़ते हुए दुख तो होता ही है भले ही वह स्थाई निवास न भी हो।

"अब आप फिर यहां टेबल लगा लेना, इधर ही बैड डाल लेना" भाटि ने भरे गले से कहा।

वह दूर बने मकानों को खिड़की से देखने लगा जो उन दिनों नहीं ब थे और एक बड़ा सा पहाड़ उसके स्टडी टेबल पर बैठे-बैठे ही नजर आ था। जामुनी रंग का पहाड़, जिसका रंग हर मौसम में बदल जाता, बरस में गहरा हरा, सर्दियों में बर्फ से सफेद, पतझड़ में पीला और मौसम सा होने पर हल्का नीला। उसे इस पहाड़ से बड़ा प्यार था। उसका रंग ब लना बहुत ही भला लगता। लेकिन अब इन रंगों का स्थान एक पक्के मका ने ले लिया है और पीली दीवार बन गया वह टिब्बा।

"आईये लंच कर लें," भाटिया ने कहा। उसे भाटिया के मुंह पर अभ भी रंग-बिरंगा पर्वत नजर आ रहा था। बीस वर्षों के अन्तराल से वर्तमा में आने के लिए उसे कुछ क्षण लगे।

खाना खाकर उसकी स्थिति एक शावक सी हो गई जो स्वच्छंद होक कुलाचे मारना चाहता हो।

वह इस शहर की गलियों, बाजारों, सड़कों, मैदानों में घूम-घूम क बचपना लौटाना चाहता था।

सबसे पहले वह डाकखाने से सटे बाज़ार में गया। बाजार में पत्थर लगे थे। वही पत्थर जिनकी सीध में वह चला करता था। कुछ घिस गये हैं। थोड़ी-दूर चलने पर उसका सांस फूल गया। कभी दौड़कर वह हलवाई की दुकान से समोसे लाया करता था। पापा जी समोसों के बहुत शौकीन थे। स्कूल से आते ही उसकी डयूटी होती थी समोसे लाना। उतराई चढ़ाई जीवन का एक भाग थी।

दम मारने के लिए वह अखबार वाले के पास रुका। एक स्टूल पर बैठ गया। अखबार की दुकान वही लेकिन दुकानदार कोई और था। उन दिनों लाला रामदास के पास एजेंसी थी। कुछ अखबार ही आते थे। लाला जी स्वयं एक अखबार थे। पूरा अखबार पढ़ कर सुना देते, तप्सरा करते और

फिर बहस छिड़ जाती चीन की लड़ाई पर। बीच-बीच में वे फर्स्ट वर्ल्ड वार का हवाला भी दिये जाते थे। शहर की पूरी खबरें भी उनसे लोग सुना करते। अखबार के साथ-साथ पान का काम भी था। अब इस नवयुवक को फुर्सत नहीं थी। अखबार के साथ वह वीडियो कैसेट लायब्रेरी चलाता है।

कुछ पुरानी दुकानें पक्की हो गई थीं। उन दुकानों पर बैठे लोग जिन्हें वह चाचा, ताऊ, अंकल आदि संबोधित करता था उनके चेहरों पर चिपके बीस वर्ष साफ झलक रहे थे।

यहाँ की एक विशेषता थी कि जमादारनी चाची कहलाती, धोबन ताई-दाई बुआ···ऐसे कितने ही सम्बन्ध। पर समय की दौड़ में ये रिश्ते लुप्त हो गये थे।

"बड़ी खुशी हुई बेटा···आप अपने पापा जी की जगह ही लग गये हो और यहीं आ गये हो। हमारा बड़ा प्यार था आपके पापा से। बड़े ही नेक इन्सान थे। हमारी बड़ी इज्जत करते थे," लाला नेकी राम कहने लगे।

उसने देखा नेकी राम के चश्मे का लैंस अब इससे अधिक मोटा होने की स्थिति में नहीं है। वे अंदाजे से ही पहचान रहे हैं। दुकान पर पंसारी का छोटा-मोटा सामान ही रखा है।

"बेटा अब हमने क्या करना है···दीपक और नरेश तो दिल्ली में सैटल हो गये हैं। मैं और तुम्हारी ताई हैं बस यहां। यहाँ से छोड़कर कहाँ जायेंगे। हम दिल्ली जैसी जगह में नहीं रह सकते," कहते हुए नेकी राम ने सामने की दुकान से चाय मंगा ली।

बाजार में घूम रहे ग्राहकों में कुछ पुराने लोग थे कुछ नई पौध थी। कुछ ग्रामीण पहले की तरह लकड़ी का गट्ठर सिर पर लादे, बेचने के लिए बाजार से गुजर रहे थे। भले ही यहां गैस एजेंसी खुल चुकी थी लेकिन सर्दियों में बिना अंगीठी जलाए गुजारा नहीं।

कई लोगों के बाल खिचड़ी हो गए थे। जिनके पहले खिचड़ी थे, अब सफाचट हो गए थे।

वे कन्यायें जिनकी नाक बहते उसने देखा था, उनके शरीर पर बीस वर्ष

उभर आये थे। कुछ ऐसे चेहरे लग रहे थे मानो पासपोर्ट साईज फोटो को एन्लार्ज कर दिया गया हो।

कुछ कार्यालयों के कर्मचारी रिटायर हो गये थे। जिन्होंने ज्वाएन किया था उसके समय, वे भी बूढ़े हो चले थे।

नगर की राजनीति में कोई खास अन्तर नहीं था। शुरू से दो गुट चले आ रहे हैं। इलैक्शन में केवल प्रत्याशी बदल जाते हैं बैंक वही रहती है।

बाजार में टी. वी. व वीडियो का धंधा जोरों पर चल निकला है। एक दो काफी हाऊस खोल दिये हैं। पान वालों ने आईसक्रीम से लेकर एस्प्रो तक दुकानों में सजा दी हैं। कहां पहले अधिकाधिक दो दुकानें पान की होती थीं और कोई मिलावट नहीं।

दुकानों पर बड़ी-बड़ी कंपनियों ने अपने रंग-बिरंगे बोर्ड लटकवा दिये हैं। मकानों की छतों पर मशरूम की तरह एन्टीना उग आए हैं। कुछ सड़के पक्की हो गई हैं।

उसके बचपन में जहां गैस के हंडे जलते थे वहां सोडियम वेपर लैंप अपनी तेज पीली रोशनी से सड़कें जगमगा रहे हैं। स्कूल के साथ-साथ एक संस्था ने कालेज खोल दिया है।

उन दिनों गिनकर चार बसें आया करती थीं आज सौ से अधिक यहां से गुजरती हैं। चहल-पहल बढ़ गई है। टीन की छतें लिंटर में बदल गयी है।

वह लोयर बाजार में पहुंच गया है। बिना परिचय के उसे कोई पहचानता नहीं। हां उसका क्लास फैलो राकेश अपनी पैतृक दुकान पर अवश्य बैठा है।

"आपने पहचाना मुझे ?"

"आईये बैठिये...कोलगेट पामालिव से आए हैं ?"

"नहीं यार ! मैं हूं पोस्ट मास्टर भाटिया साहब का लड़का।"

"ओहो ! पहचान गया...पहचान गया," कहते राकेश और वह गले मिले।

"कहां हैं आज कल...हमारे शहर का रास्ता कैसे भूल गये ?"

"बस आपके शहर में ही आ गया हूं पापाजी की जगह।"

"वेरी गुड ! तब तो बड़ा मजा आएगा...क्या सेवा करें...दयालू दो ठंडे पकड़ ले साथ से कहां ठहरे हो ?"

"ऊपर वहीं पोस्ट मास्टर साहब के...।"

"अच्छा...अच्छा और सुनाओ...भाटिया साहब के क्या हाल हैं ?"

"उनकी जगह ही तो मुझे...।"

"सॉरी...और आँटी कैसे हैं ? साथ आयी हैं...फैमिली वैमिली !"

"अभी अकेला आया हूं...सैशन के बाद ही बाकी सब आ सकेंगे।"

"और यहां कौन-कौन हैं ?"

"हमारे घर में तो बस मैं ही हूं...पेरेंटस एक्सपायर हो गये...बच्चे ...पढ़ रहे हैं।"

"कहाँ ?"

"सेन्ट्रल स्कूल में।"

"दुकान बड़ी टॉप की बना दी है।"

"सब आपकी कृपा है।"

"और क्या काम कर रखा है ?"

"दो टैक्सियां हैं...एक ट्रक यूनियन में लगा दिया है। छोटा अलग हो गया था। उसने आढ़त बाजार में ट्रांस्पोर्ट का काम शुरू कर रखा है।"

"यार वो डब्बू पप्पू का कुछ पता है आजकल कहां हैं ?"

"वो...यार सीधा पूछ न डॉली कहाँ है ?"

"चल यहीं समझ ले।"

"विजयवाड़ा है ब्याही हुई एक मेजर है...हां वैसे इन दिनों आई हुई है।"

"अच्छा।"

"मिलना है ?"

"हां।"

"तो शाम को मिलट्री एरिया की ओर चले जाना।"

कोल्ड ड्रिंक के बाद उसमें एक गर्माहट भर गई। तेज कदमों से वह बाजार की चढ़ाई चढ़ने लगा। दम फूल जाने पर उसका मन कर रहा था किसी अन्य दुकान पर बैठ कर नार्मल हो जाए पर शाम ढल रही थी। फिर यात्रा की थकान भी थी।

धूप पर्वत शिखरों पर ऊंचे-ऊंचे चीड़ के वृक्षों पर ठहरी हुई थी। कुछ पर्वतों पर दूसरे बड़े पहाड़ों की परछाई पड़ने से काला सा साया आ गया था।

हवा में ठंडक तैरने लगी। बाजार से गुजर कर वह आर्मी क्षेत्र से गांव की ओर जाती एक सड़क पर आ गया। गांव वाले सौदा आदि लेकर लौटने लगे थे।

सड़क के दोनों ओर सरू के पेड़ बड़े प्यारे लगे उसे। उसके जाने के बाद ही इन्हें लगाया गया था।

शाम गहरा जाने की प्रतीक्षा में वह सड़क के किनारे बने एक डंगे पर बैठ गया और दूर जाती पहाड़ी नदी को निहारने लगा।

यह भी अच्छा है अधिक लोग पहचानते नहीं हैं उसे—यह सोचकर उसे अच्छा लगा—वरना ऐसे बैठे उसे खुद अटपटा लगता।

कुछ देर में उसने देखा एक महिला अपने बच्चों के साथ आ रही है।

उसके चेहरे पर भी बीस वर्ष चिपक गए थे। ऊपर से नीचे तक भारी भरकम। "वाकई एक आर्मी आफीसर की वाईफ लगती है," उसने मन ही मन कहा। "बच्चे भी बाप पर गये लगते हैं।"

उसके शरीर में सिहरन दौड़ गई। ठीक पहचाना उसने। वह डॉली ही थी।

वह वापिस लौटने का उपक्रक मरने लगा ताकि उसे-सामने से क्रास कर सके। और फिर जी भर के बातें कर सके। बचपन की यादें ताजा कर ले। पापा की ट्रांसफर से पहले, मम्मी और डाली की मां की कहा सुनी हो गई थी उन दोनों को लेकर। डाली काफी दिनों तक नहीं बोली थी। वह बोली

थी तो केवल अन्तिम दिन जब वे देहरादून के लिए बस पकड़ने वाले थे ।

वह उठकर विपरीत दिशा में चल पड़ा । डाली सड़क के मोड़ में छिप गई थी । उसने अंदाजा लगाया कि उनका टकराव ठीक उसी मोड़ पर होगा इस लिए तेज कदमों से चलने लगा ।

मोड़ के ठीक ऊपर एक सड़क फटती थी जिसे यहां दौ सड़का कहते हैं । डाली वहाँ तक पहुंच गई थी ।

दोनों आमने-सामने आ गये । डाली कुछ ठिठकी और बोलने को हुई । बीस वर्ष पूर्व के दिनों में खो गई ।

पल भर के लिए उसके कदम रुके । गौर से उसने देखा ।

देखने के बाद दो बसे रास्ता बदल कर ऊपर वाली सड़क पर चढ़ने लगी ।

□

सूख सूख फट्टी

पर्वत शिखर पर स्थित इस छोटी सी पाठशाला में आधी छुट्टी के पश्चात् सभी अध्यापक व अध्यापिकायें दोपहर की ठण्डी धूप का आनन्द लेते हुए, कुर्सी पर देह चिपकाये बच्चों को तख्ती पर डिक्टेशन देते हैं। खाना खा लेने के बाद सभी बच्चे मैदान में रखे पानी के टब पर अपनी-अपनी तख्तियां धोने के लिए वैसे ही कलरव करते हैं जैसे सबसे बाद में आने वाली महिलायें सबसे पहले मिट्टी का तेल लेना चाहती हैं।

घंटी बजते ही सारा कोलाहल अपने-अपने छोटे-छोटे कमरों में सिमट जाता है और अध्यापक की चीखती ध्वनि नन्हें मुन्नों की कलमों से तख्तियों पर अंकित होनी आरम्भ हो जाती है।

पानी का टब बच्चों से घिरा था परन्तु एक किनारे पेड़ के नीचे एक अबोध बालिका बड़ी तन्मयता से बार-बार गाजनी पूरे वेग से मल रही थी और बार-बार एक सधे हुए रंग साज की तरह उसे देख रही थी जो टेबल से तब तक हाथ नहीं उठाता जब तक उसमें उसका प्रतिबिम्ब न झलकने लगे।

कल ही उसने स्कूल कैन्टीन से दस पैसे की गोले वाली गाजनी मिट्टी खरीदी है। आज पिछले बचे हुए छोटे से टुकड़े को उसने हवा में उछाला और एक ही ठोकर में नीचे पहाड़ की खड्ड में पहुंचा दिया।

एक ओर बच्चे मिश्रित स्वर में गा रहे हैं 'सूख-सूख फट्टी'''चन्दन की गट्टी'''आएगा राजा'''देगा छुट्टी।'

उनके छोटे-छोटे हाथों में आधी सूखी तख्तियां हवा में जोर-जोर से लहरा

रही हैं।

एक ग्रुप कोरस में गा रहा है:—

"काला चोर आया
डण्डा लेके आया
डण्डा गया टूट
फट्टी गयी सूख।"

कुछ बच्चे जिनके गालों और हाथों पर काली स्याही कहीं-कहीं उनके पढ़ने का सबूत दे रही है, नेत्र बन्द करके सम्मिलित स्वर में चिल्ला रहे हैं—

कऊवे कऊवे ढोल बजा,
चार आने की स्याही ला,
आधी तेरी आधी मेरी,
तू मर जाए, सारी मेरी।

उनमें यह विश्वास है कि ऐसा गाने से स्याही और गाढ़ी हो जाती है। स्याही फीकी रह जाने पर मास्टर जी के थप्पड़ की याद आते ही उनका स्वर और तीव्र हो जाता है।

मिक्की आज उस गाने वाले ग्रुप से कहीं अलग है वरना दोपहर बाद की इमला लिखने से पहले वह पण्डित जी की तरह मन्त्रौच्चारण करती है।

'मेरी स्याही फिक्कल
तेरी स्याही गुडड्ल'

इस मन्त्र के साथ दवात में कलम मूसल की तरह चलाने से उसका आत्म विश्वास बढ़ता था और यकीन रहता कि ऐसा उल्टा बोलने से दूसरे साथी की स्याही फीकी और अपनी गाढ़ी हो जाती है।

तख्ती को उसने ध्यान से देखा। उस पर कहीं-कहीं निर्मल आकाश में बादलों के छोटे-छोटे टुकड़ों की तरह गीले धब्बे बाकी थे। सूखे स्थान पर उंगली लगा कर आश्वस्त हो गई कि आज तख्ती टेबल की तरह मुलायम हो गई है।

स्कूल की एक दीवार के साथ सभी बच्चों की तख्तियां सूखने के लिए

सूख सूख फट्टी

पर्वत शिखर पर स्थित इस छोटी सी पाठशाला में आधी छुट्टी के पश्चात् सभी अध्यापक व अध्यापिकायें दोपहर की ठण्डी धूप का आनन्द लेते हुए, कुर्सी पर देह चिपकाये बच्चों को तख्ती पर डिक्टेशन देते हैं। खाना खा लेने के बाद सभी बच्चे मैदान में रखे पानी के टब पर अपनी-अपनी तख्तियां धोने के लिए वैसे ही कलरव करते हैं जैसे सबसे बाद में आने वाली महिलायें सबसे पहले मिट्टी का तेल लेना चाहती हैं।

घंटी बजते ही सारा कोलाहल अपने-अपने छोटे-छोटे कमरों में सिमट जाता है और अध्यापक की चीखती ध्वनि नन्हें मुन्नों की कलमों से तख्तियों पर अंकित होनी आरम्भ हो जाती है।

पानी का टब बच्चों से घिरा था परन्तु एक किनारे पेड़ के नीचे एक अबोध बालिका बड़ी तन्मयता से बार-बार गाजनी पूरे वेग से मल रही थी और बार-बार एक सधे हुए रंग साज की तरह उसे देख रही थी जो टेबल से तब तक हाथ नहीं उठाता जब तक उसमें उसका प्रतिबिम्ब न झलकने लगे।

कल ही उसने स्कूल कैन्टीन से दस पैसे की गोले वाली गाजनी मिट्टी खरीदी है। आज पिछले बचे हुए छोटे से टुकड़े को उसने हवा में उछाला और एक ही ठोकर में नीचे पहाड़ की खड्ड में पहुंचा दिया।

एक ओर बच्चे मिश्रित स्वर में गा रहे हैं 'सूख-सूख फट्टी···चन्दन की गट्टी···आएगा राजा···देगा छुट्टी।'

उनके छोटे-छोटे हाथों में आधी सूखी तख्तियां हवा में जोर-जोर से लहरा

रही हैं।

एक ग्रुप कोरस में गा रहा हैः—

''काला चोर आया
डण्डा लेके आया
डण्डा गया टूट
फट्टी गयी सूख।''

कुछ बच्चे जिनके गालों और हाथों पर काली स्याही कहीं-कहीं उनके पढ़ने का सबूत दे रही है, नेत्र बन्द करके सम्मिलित स्वर में चिल्ला रहे हैं—

कऊवे कऊवे ढोल बजा,
चार आने की स्याही ला,
आधी तेरी आधी मेरी,
तू मर जाए, सारी मेरी।

उनमें यह विश्वास है कि ऐसा गाने से स्याही और गाढ़ी हो जाती है। स्याही फीकी रह जाने पर मास्टर जी के थप्पड़ की याद आते ही उनका स्वर और तीव्र हो जाता है।

मिक्की आज उस गाने वाले ग्रुप से कहीं अलग है वरना दोपहर बाद की इमला लिखने से पहले वह पण्डित जी की तरह मन्त्रौच्चारण करती है।

'मेरी स्याही फिक्कल
तेरी स्याही गुडड्ल'

इस मन्त्र के साथ दवात में कलम मूसल की तरह चलाने से उसका आत्म विश्वास बढ़ता था और यकीन रहता कि ऐसा उल्टा बोलने से दूसरे साथी की स्याही फीकी और अपनी गाढ़ी हो जाती है।

तख्ती को उसने ध्यान से देखा। उस पर कहीं-कहीं निर्मल आकाश में बादलों के छोटे-छोटे टुकड़ों की तरह गीले धब्बे बाकी थे। सूखे स्थान पर उंगली लगा कर आश्वस्त हो गई कि आज तख्ती टेबल की तरह मुलायम हो गई है।

स्कूल की एक दीवार के साथ सभी बच्चों की तख्तियां सूखने के लिए

धूप में रखी हैं। उसने भी स्थान देखकर रख दी और विशिष्ट भक्त की भांति उस पर नज़र गढ़ाये उल्टे पांव पीछे हटी।

एकाएक उसका ध्यान पप्पू की फटटी पर गया जिस पर सूखने के पश्चात उसका 'प' धीरे से उभर आया था - उसे बहुत अफ़सोस हुआ कि तख्ती अधिक चमकाने की खातिर आज 'मि' लिखना भूल गई है।

'तख्ती तो सबसे अच्छी मेरी है, आज चाहें कोई आकर मिला ले। अब पप्पू अपनी फट्टी की शान नहीं मार सकता। पापा भी नहीं कह सकते कि तू फट्टी ठीक तरह नहीं धोती। रही बात सुलेख़ की, वह भी आज मेरा सबसे अच्छा होगा। क्योंकि कलम का काना मैंने बाँस वाला लिया है जो टूटता नहीं और घड़ा भी बड़ी बहनजी ने है।'

'आज मम्मी को देखती हूं क़ैसे कहती हैं ? 'मिक़्की तू कीड़े मकौड़े मार देती है, पप्पू को देख कैसे मोतियों से अक्षर बनाता है।'

रोज वह इन बातों को सुनती है। पर आज वह हार नहीं मानेगी। इसके लिए उसने बिन्दियों वाली काली स्याही खरीदी है वह मंहगी आती है पर इसके लिए उसने पैसे उस दिन मीठी इमली न खा कर बचाये थे। पप्पू को इमला में हराने का दृढ़ निश्चय है।

'उसकी लिखाई से तो मेरी अच्छी हैं। मॉनीटर क्या बना दिया है मास्टर जी ने, अपनी लिखाई को सबसे सुन्दर समझता है। अब की बार मैं मॉनीटर बनूंगी।'

उसे अचानक ख्याल आया कहीं कोई बस्ते से उसकी गाढ़ी स्याही न निकाल ले इसलिए वह तेजी से क्लास रूम में भागी। तभी स्कूल की घंटी के साथ बाल-कलरव कमरों में डूब गया।

मिक्की ने पप्पू से तख्ती मांगी और अपनी फट्टी पर रख के, बायें घुटने से दबाए, 'ड्राई सैल' से निकाले 'कार्बन रॉड' द्वारा गाढ़ी-गाढ़ी रेखाये थोड़े थोड़े अन्तर पर खींच दी। उसे देखकर सन्तोष हुआ कि पप्पू की रेखायें फीकी और टेड़ी थी। उसे अपनी विजय निश्चत सी लगी।

अध्यापक के प्रवेश ने पक्षियों की सी चहचाहट समाप्त कर दी। कुछ क्षणों

पश्चात उनकी ऊंची-ऊंची इमला बोलती सधी हुई आवाज 'क म ल घ र च ल' आने लगी जो काली स्याही से प्रत्येक बालक-बालिका की तख्तियों पर चित्रित हो रही थी।

मिक्की की कलम से गढ़े हुए अक्षर निकल रहे थे। असुन्दर अक्षरों पर पर वह पुनः गाढ़ी-गाढ़ी स्याही फिरा रही थी। एक बार पप्पू को देखा जो गर्दन को फट्टी पर झुकाये बहुत जोर लगा कर लिख रहा था और कलम का उपरला भाग उसके स्वैटर में फंस जाता था।

जब अध्यापक बैठी पंक्तियों के मध्य से निकल जाती तो पीछे बैठे सब विद्यार्थी एक दूसरे की तख्तियां देख कर अशुद्धियां ठीक कर लेते या फिर शरारती बच्चे अपने आगे बैठे सहपाठी के कान पर पटट से मार देते। तब तक अध्यापक का 'अबाऊट टर्न' हो जाता। उसके मुड़ते ही कई बच्चे दिन भर का बदला एक दूसरे पर स्याही छिड़क कर लेते। या लिखते-लिखते उंगलियों पर उतर आई स्याही चुपचाप टाट की निचली ओर पोंछ देते।

मिक्की ने आज ऐसा कोई कृत्य नहीं किया। आज वह निष्कलंक मयंक की तरह लग रही थी जो असम्भव था। लिखते हुए वह आने वाले क्षणों की कल्पना भी करती जा रही थी।

पूरी छुट्टी के बाद आज वह पप्पू को चैलेंज दे कर फट्टी मिलाने को कहेगी। वह नहीं कह सकेगा कि कीड़े मकोड़े चल रहे हैं। फ़िर वह पीठ के पीछे छिपाई तख्ती उस की आंखों के सामने कर देगी और कहेगी—

'तेरे से अच्छा लिखती हूं—आँखें फाड़ कर देख। अपना 'अ' देख, कैसा खटमल सा लगता है और ठ' का पेट बिल्कुल वैसा है ज़ैसे चौक के नत्थू हलवाई का पेट।'

'कहीं पप्पू कलम न दिखाने के लिए कहे', उसे शंका हुई। 'नहीं। कलम बस्ते में छिपा दूंगी, कहीं चिढ़ के तोड़ ही न दे।'

पूरी छुट्टी होने में कुछ मिनट ही शेष थे। अध्यापक प्रतिक्षारत थे। अध्यापिकाओं ने स्वैटर समेट लिये थे। जिन बच्चों की डयूटी थी वे टाट लपेट कर कमरों में रख रहे थे। स्वर्णिम धूप चीड़ के पेड़ों के शिखरों पर

धूप में रखी हैं। उसने भी स्थान देखकर रख दी और विशिष्ट भक्त की भांति उस पर नज़र गढ़ाये उल्टे पांव पीछे हटी।

एकाएक उसका ध्यान पप्पू की फटटी पर गया जिस पर सूखने के पश्चात उसका 'प' धीरे से उभर आया था - उसे बहुत अफ़सोस हुआ कि तख्ती अधिक चमकाने की खातिर आज 'मि' लिखना भूल गई है।

'तख्ती तो सबसे अच्छी मेरी है, आज चाहें कोई आकर मिला ले। अब पप्पू अपनी फट्टी की शान नहीं मार सकता। पापा भी नहीं कह सकते कि तू फट्टी ठीक तरह नहीं धोती। रही बात सुलेख़ की, वह भी आज मेरा सबसे अच्छा होगा। क्योंकि कलम का काना मैंने बाँस वाला लिया है जो टूटता नहीं और घड़ा भी बड़ी बहनजी ने है।'

'आज मम्मी को देखती हूं क़ैसे कहती हैं ? 'मिक़्की तू कीड़े मकौड़े मार देती है, पप्पू को देख कैसे मोतियों से अक्षर बनाता है।'

रोज वह इन बातों को सुनती है। पर आज वह हार नहीं मानेगी। इसके लिए उसने बिन्दियों वाली काली स्याही खरीदी है वह मंहगी आती है पर इसके लिए उसने पैसे उस दिन मीठी इमली न खा कर बचाये थे। पप्पू को इमला में हराने का दृढ़ निश्चय है।

'उसकी लिखाई से तो मेरी अच्छी हैं। मॉनीटर क्या बना दिया है मास्टर जी ने, अपनी लिखाई को सबसे सुन्दर समझता है। अब की बार मैं मॉनीटर बनूंगी।'

उसे अचानक ख्याल आया कहीं कोई बस्ते से उसकी गाढ़ी स्याही न निकाल ले इसलिए वह तेजी से क्लास रूम में भागी। तभी स्कूल की घंटी के साथ बाल-कलरव कमरों में डूब गया।

मिक्की ने पप्पू से तख्ती मांगी और अपनी फट्टी पर रख के, बायें घुटने से दबाए, 'ड्राई सैल' से निकाले 'कार्बन रॉड' द्वारा गाढ़ी-गाढ़ी रेखाये थोड़े थोड़े अन्तर पर खींच दी। उसे देखकर सन्तोष हुआ कि पप्पू की रेखायें फीकी और टेड़ी थी। उसे अपनी विजय निश्चत सी लगी।

अध्यापक के प्रवेश ने पक्षियों की सी चहचाहट समाप्त कर दी। कुछ क्षणों

पश्चात उनकी ऊंची-ऊंची इमला बोलती सधी हुई आवाज 'क म ल घ र च ल' आने लगी जो काली स्याही से प्रत्येक बालक-बालिका की तख्तियों पर चित्रित हो रही थी ।

मिक्की की कलम से गढ़े हुए अक्षर निकल रहे थे । असुन्दर अक्षरों पर पर वह पुनः गाढ़ी-गाढ़ी स्याही फिरा रही थी । एक बार पप्पू को देखा जो गर्दन को फट्टी पर झुकाये बहुत जोर लगा कर लिख रहा था और कलम का उपरला भाग उसके स्वैटर में फंस जाता था ।

जब अध्यापक बैठी पंक्तियों के मध्य से निकल जाती तो पीछे बैठे सब विद्यार्थी एक दूसरे की तख्तियां देख कर अशुद्धियां ठीक कर लेते या फिर शरारती बच्चे अपने आगे बैठे सहपाठी के कान पर पटट से मार देते । तब तक अध्यापक का 'अबाऊट टर्न' हो जाता । उसके मुड़ते ही कई बच्चे दिन भर का बदला एक दूसरे पर स्याही छिड़क कर लेते । या लिखते-लिखते उंगलियों पर उतर आई स्याही चुपचाप टाट की निचली ओर पोंछ देते ।

मिक्की ने आज ऐसा कोई कृत्य नहीं किया । आज वह निष्कलंक मयंक की तरह लग रही थी जो असम्भव था । लिखते हुए वह आने वाले क्षणों की कल्पना भी करती जा रही थी ।

पूरी छुट्टी के बाद आज वह पप्पू को चैलेंज दे कर फट्टी मिलाने को कहेगी । वह नहीं कह सकेगा कि कीड़े मकोड़े चल रहे हैं । फ़िर वह पीठ के पीछे छिपाई तख्ती उस की आंखों के सामने कर देगी और कहेगी—

'तेरे से अच्छा लिखती हूं—आँखें फाड़ कर देख । अपना 'अ' देख, कैसा खटमल सा लगता है और ठ' का पेट बिल्कुल वैसा है जैसे चौक के नत्थू हलवाई का पेट ।'

'कहीं पप्पू कलम न दिखाने के लिए कहे', उसे शंका हुई । 'नहीं । कलम बस्ते में छिपा दूंगी, कहीं चिढ़ के तोड़ ही न दे ।'

पूरी छुट्टी होने में कुछ मिनट ही शेष थे । अध्यापक प्रतिक्षारत थे । अध्यापिकाओं ने स्वैटर समेट लिये थे । जिन बच्चों की ड्यूटी थी वे टाट लपेट कर कमरों में रख रहे थे । स्वर्णिम धूप चीड़ के पेड़ों के शिखरों पर

पहुंच चुकी थी। पर्वतमालाओं के केवल उच्च शिखर ही धूप से चमक रहे थे शेष घाटी में साँय ने डेरा डाल दिया था।

घंटी बजते ही छोटे-छोटे बस्ते छन्न-छन्न खट् खट् करते पंक्तियों में दौड़ने लगे। घण्टी की ध्वनि से उसे अद्भुत सुखद अनुभूति हुई। कल्पित चित्रों का साकार रूप देखने को वह उदिग्न हो उठी।

प्रतिदिन की भाँति मिक्की पंक्ति से भागी नहीं। अपितु भागते हुए पप्पू को आवाज देकर बुला लिया तथा टब के समीप, वृक्ष के नीचे ले गई। कुछ क्षण उसका ध्यान दूर पहाड़ पर जा रही बस की ओर आकर्षित हो गया।

'मिक्की घर नहीं चलना ?' उसकी एकाग्रता भंग हुई।

'क्या जल्दी है···चले जायेंगे' वह चीखकर बोली।

'मैं जा रहा हूं।'

'ठहर मैं तुझे एक चीज दिखाऊं,' कहते हुए उसने बस्ते में छिपाई फट्टी उसकी आंखों से चिपका दी। फिर धीरे-धीरे पीछे हटते हुये उसकी मिच-मिचाती आंखों को आशा भरी दृष्टि से देखने लगी।

मूक खड़ी वह पप्पू के अधरों से अपेक्षित प्रशंसात्मक दो शब्दों को कैद कर लेना चाहती थी। इस क्षण वह कुछ 'नर्वस' भी थी। यदि इस अबोध हृदय की अमूल्य निधि कुछ थी तो थी सुन्दर तख्ती पर सुन्दर अक्षर माला। उसका नन्हा सा हृदय धड़क रहा था और पप्पू खामोश।

'बोल न कैसी है ? आखिर उसने नीरवता तोड़ी। पप्पू कुछ देर शांत रहा और अधरों पर बनावटी हंसी लाते हुए अपनी सारी स्याही उसकी तख्ती पर उलट दी और जोर से चिल्लाने लगा—

'बहुत अच्छी है बहुत अच्छी है,···।'

तख्ती पर बहती हुई स्याही नदियों की तरह कई शाखाओं में विभाजित होकर मिक्की की स्कर्ट पर समा गई। वृक्ष पर बैठे कऊये कांय-कांय कर उड़ गये सर्दी बढ़ती जा रही थी।

मिक्की के हाथों की पकड़ ढीली हो गई। तख्ती और धरती की समानान्तर दूरी कम हो गई। उकड़ूं बैठ कर फट्टी उसने एक ही बार खड्ड में पहुंचा दी।

मिक्की के मुंह पर आया विशुद्ध रस शून्य में परिवर्तित हो गया। धमनियों का सम्पूर्ण रक्त अपना रंग बदल कर नेत्रों में उभर आया। सारे दिन का परिश्रम करुण पलकों से निकल पत्थरों पर छितरा गया। जिसे वह सप्ताह भर से परास्त करने में संलग्न है वही उसे अन्त में कचोट गया।

पप्पू का स्वर गीला होते हुए भी बनावटीपन लिये बोला—

"मिक्की तू नाराज हो गई ?"

वह जड़वत रही।

'ले तू इस फट्टी से मार ले मुझे !'

'मैं नी बोलती तेरे से'

'तूने बहुत अच्छा लिखा था...मैं तो मजाक कर रहा था।'

'पहले यह बता...तूने स्याही क्यू गिराई ?'

'अब 'नी' गिराऊंगा...काली माई की कसम अब घर चल।'

'मैं पापा से बताऊंगी...तुझे मार पिटवाऊंगी।'

'नहीं पापा से नहीं कहना। जो तू कहेगी वही करूंगा।'

'अच्छा तूने ही मेरी फट्टी खराब की है, तू ही दौबारा लिख कर दे और खड्ड से भी तू ही ला फट्टी।'

पप्पू ने आश्वासन देते हुए सिर हिलाया और अपनी तख्ती पर जो एक ओर कोरी थी, कलम दवात लिए झुक गया।

घुटनों के बल बैठ कर मिक्की उसका निरीक्षण करने लगी।

'उतना अच्छा ही लिखना जैसे मैंने लिखा था...अगर कीड़े-मकौड़े बनाये तो दुबारा लिखाऊंगी।'

पप्पू लिखता रहा, वह देखती रही। आंखें फाड़ कर उसने पप्पू की पीठ पर एक मुक्का लगाया और चिल्लाई—

'ठ' तूने फिर नत्थू हलवाई के पेट सा बनाया ! ठीक कर इसको।'

'ठ' ठीक कर वह फिर लिखने लगा। थोड़ी देर बाद वह पुनः चीखी।

'अ' का मुंह तू जैकी कुत्ते के मुंह जैसा क्यों बनाता है ?' एक दो और संशोधन करवाये। उसे क्रोध आ रहा था। पप्पू उसकी पसंद अनुसार नहीं

लिख रहा था। वह फिर दूर जाती बस को देखने लगी जो पहाड़ के मोड़ों में कभी ओझल हो जाती तो कभी दिखने लगती।

सबसे अन्त में पप्पू ने उसकी इच्छानुसार लिखा।

'जैहिन्द···मिक्की।'

अच्छा अभी आती हूं, कह कर वह एक ओर चली गई। पप्पू ने कलम और दवात बस्ते में रखी। तख्ती को हवा में झुला-झुला कर गीली स्याही सुखाने का उपक्रम करने लगा।

'खत्म कर दी।'

'हां।'

'दिखा।'

पप्पू ने तख्ती दोनों हाथों में उठाकर ऐसे दिखाई मानों क्लास में अध्यापक को दिखा रहा है।

'कैसी है ?'

'तू आँख बन्द कर, मैं देखकर बताती हूं कैसी है।' मिक्की प्रसन्न होकर बोली।

कुछ क्षणों पश्चात जब पप्पू ने आंखे खोली तो अवाक रह गया। मिक्की ने पूरी दवात नई लिखी फट्टी पर उड़ेल दी। तख्ती पर उसका सुलेख बाढ-ग्रस्त हो गया था। मोतियों से अक्षर, दुर्घटनाग्रस्त हो गये थे। मिक्की प्रसन्नता से झूम उठी और पप्पू का मुख मण्डल मद्धिम पड़ गया।

सांय ढल चुकी थी। पाठशाला की वीरान दीवारें मिक्की की किलकारियों से प्रतिध्वनित हो रहीं थीं। धूप और अंधेरा गले मिल रहे थे। बच्चों के मुख भी उनकी तरह श्याम और स्वर्णिम हो गये।

□

शुभ चिन्ता

जैसे हर दफ्तर में एक अदद बॉस के कई यू वर्ज़ फेदफुल्ली होते हैं वैसे ही इस साऊथ इंडियन बैंक की शाखा में भी थे। आफिशियली आपको फेदफुल्ली लिखना पड़ता है भले ही दिल आपका करे कि लिख दें—तेरा बाप। पर मजबूरी है साहब बॉस को यह न चाहते हुए भी लिखना पड़ता है। बॉस ही क्या आप किसी भी ढ़ाई टके के अफसर को कोई खत लिखें कमबख्त वे शब्द लिखे बिना अर्जी अधूरी मानी जाती है। परीक्षा में तो नम्बर ही काट दिये जाते हैं।

काऊंटर पर बारह बैंक कर्मचारी ऐसे सज-धज कर बैठते हैं मानलो सब की पत्नियां या पति उनके कपड़े निरमा से ही धोते हैं और सभी कोलगेट पेस्ट से दांत साफ करते हैं और तेज धार वाले प्लैटीनम ब्लेड से शेव करते हैं। विमल के ही सूटिंग-शर्टिंग पहनते हैं।

इस बैंक में अनुशासन बढ़िया है। जिससे कई बार यह धोखा भी हो जाता है कि शायद अभी-अभी लुट कर हटा हो। वातावरण ऐसा ही रहता है। इस सबका क्रैडिट जाता है इसके शाखा प्रबंधक दाँतवाला को जो इस घूमने वाली कुर्सी पर फिक्स्ड डिपाजिट की तरह दस वर्षों से जमे हुए हैं।

खैर हमने इस बैंक में खाता न तो दांतवाला के कोलगेट से ब्रश किये दाँत देखकर ही खोला था और न ही कोई अनुशासन देख कर।

हमने पाँच रुपये बारह वर्ष पहले कुर्बान कर दिये थे मिस झुनझुनवाला की खातिर जो उन दिनों सेविंग्ज की सीट सभालती थीं और हेमामालिनी

सी दीखती थीं और अब वक्त की मार के कारण दीना पाठक सी हुई जा रही हैं।

मेरी तरह और भी कई सज्जन (?) एक दिन पांच जमा कराते तो तीसरे दिन निकलवाने चल पड़ते। जिस दिन पाँच रुपल्ली भी पल्ले न होती तो भी मुंह उठाये चल पड़ते पूछने मिस फलाँ नम्बर का बैलेन्स बताइये।

आम के आम और गुठलियों के दाम थे। कहते हैं हर महान व्यक्ति के पीछे एक स्त्री का हाथ होता है।

इस बैंक की प्रगति के पीछे मिस झुनझुनवाला ही थीं।

अब वह पीछे बैठती हैं। उनकी जगह कई और रेखायें, जयाप्रदाए, श्री देवियां भर्ती हो चुकी हैं और बैंक प्रगति पर है।

दस बारह वर्ष पहले मैं एक ग्राहक की हैसियत रखता था अब क़्लाएंट कहलाता हूं।

बैंक का स्टाफ कुछेक नई भर्ती को छोड़कर दांतवाला समेत वहीं का वही है। मुख्यालय दक्षिण भारत में है और शाखाओं का अधिक विस्तार भी दक्षिण में ही हुआ है उत्तर में नहीं। अतः न तो प्रोन्नति ही हो रही है न तबदीली।

बैंक के बाबुओं में ग्राहक के प्रति थोड़ी वहुत इज्जत बकाया है। ये अन्य सरकारी दफ्तरों के बाबुओं की तरह अपना ही पैसा वापिस मांगने पर रिश्वत लेना जन्म सिद्ध अधिकार नहीं मानते। हाँ बिहार में कुछ बैंकों से ऐसी शिकायतें अवश्य आयी थीं। दूरदर्शन के जनवाणी कार्यक्रम में।

बैंक के भीतर का भूगोल कुछ इस प्रकार है कैबिन में दांतवाला सूर्य की तरह स्थिर हैं। धनस्थान यानि कैश कैबिन में बाबू लक्ष्मी आयंगर काफी समय से डटे हुए हैं। लेखाकार की गद्दी को भूतलिंगम जी सुशोभित कर रहे हैं। सैकंड मैन यानि नम्बर दो पोजिशन पर हैं वेंकटा बाबू। मिस झुनझुन वाला हेड क्लर्क हैं। काऊंटर पर ग्रहों की स्थिति किसी के छुट्टी चले जाने पर बदलती रहती है क्यूंकि अधिकारी वर्ग में यदि एक कर्मचारी छुट्टी जाता है तो सभी एक-एक पद आगे खिसक जाते हैं।

बैंक छोटा है इसलिए प्रोमोशन किसी न किसी कारण अटकी व लटकी पड़ी हैं।

दांत वाला हर समय टिप-टाप रहते हैं। मूछों और भवों तक को गोदरेज हेयर डाई में डुबो रखते हैं। कई बार जब दिन अधिक बीत जाते हैं तो उनकी शक्ल ब्लैक एण्ड व्हाईट फोटो सी लगने लगती है।

थोड़े सख्त किस्म के आदमी। ऊपर से अखरोट के छिलके जैसे भीतर से एक ही बार में फिस्स। उनकी केबिन में जाने से पहले मांगेलाल दो चार बीडी का धुंआ निकाल कर सोच-विचार करता कि घुसा जाय या नहीं।

मिस झुनझुनवाला भी कतराती थीं। थीं तो यूवर्ज फेंदफुली पर ढील उतनी ही देती कि दांतवाला की बत्तीसी बाहर न गिर पड़े।

दांतवाला सहगल के गानों के शोकीन और रंगीन मिज़ाजी में एकदम कढ़े हुए।

ग्राहक के रूप में उनके पास जाने में मुझे भी घबराहट होने लगती। बार-बार सेविंग्ज काउंटर पर जाने से वे मुझे अपनी केबिन में बैठे-बैठे ही पहचानने लगे थे।

एक बार गलती से उनके पास फंस गया था। गालिब के शेर और सहगल का मर्सिया सुनकर मैं बेहोश होते-होते बचा।

यदि कोई इस तरह इंप्रैस न होता तो करंट टॉपिक पकड़ लेते। और ग्राहक के निकट आने के लिए अंक विद्या पर उतर आते।

कौन सा एकाउंट नम्बर लक्की रहेगा ? कौन से दिन खाता खोला जाए, किस-किस का नाम रखा जाए। यह सब गणित करते रहते और ग्राहक की गृह समस्या तक पहुंच जाते।

संयोगवश ग्राहक कोई नारी हुई, विद् हस्बैंड या विदाऊट, इस बात से उन्हें विशेष अंतर नहीं पड़ता। इंट्रोडक्शन स्वयं कर देते। और फिर उन्हें बिना चाय समोसे के नहीं जाने देते।

किसी महिला के आ जाने पर मांगेराम पहले ही समोसों का आर्डर दे आता।

दांतवाला की एक विशेषता यह थी कि दिमाग में कोई टेन्शन नहीं रखते भले प्रोमोशन हो या न।

वे सब के भाग्य बताते थे पर सबका भविष्य उनके भाग्य के साथ जुड़ा था। वे आगे खिसकें तो सभी एक-एक सीढ़ी चढ़ें।

इसलिए सभी की प्रोमोशन पंजाब समस्या की तरह लटक रही थी।

उनके रिटायर होने में अभी काफी समय बकाया है। स्वास्थ्य भी एकदम फिट कि लम्बी छुट्टी की आवश्यकता पड़े।

टी टोटलर हैं इसलिए दुरुस्त रहते हैं। जुकाम तक नहीं होता।

ससुराल लोकल ही है। शुरु-शुरु में एक ग्राहक आए। उनकी शेरो शायरी और सहगल के गानों से प्रभावित हो अपनी कन्या का हाथ इनके हाथों में थमा गये। इसलिए ससुराल जाने के लिए भी छुट्टी नहीं लेनी पड़ती।

छुट्टियां लैप्स हो जाती हैं पर ये सज्जन उसका उपयोग नहीं करते।

बस उनकी इसी आदत से सारा स्टाफ परेशान है।

आप सोचेंगे परेशान क्यूं है? परेशान इस लिये कि बैंक के नियमानुसार जब कोई कर्मचारी छुट्टी पर होता है तो सभी एक-एक कदम आगे बढ़ जाते हैं।

जब खुदा न खास्ता दांतवाला छुट्टी लेते हैं तो वेंकटा जी उनकी घूमने वाली कुर्सी पर जा बैठते हैं और प्रबंधक कहलाते हैं। लेखाकार भूतलिंगम नम्बर दो पोजीशन पर खिसक जाते हैं और झुनझुनवाला उनकी जगह बैठती हैं। दफ्तरी क्लर्क बन जाता है, चपरासी दफ्तरी। चपरासी उस दिन कोई नहीं होता।

हम भी राजा तुम भी रानी कौन पिलाए ग्राहकों को पानी।

ग्राहक उस दिन स्वयं पानी पीते हैं। लैजर स्वयं उठाकर चैकिंग हैड तक ले जाते हैं। टोकन बुक उठाकर कैशियर तक पहुंचाते हैं। वाउचर वगैरा इधर-उधर ले जाते हैं। उस दिन काम भी जल्दी होता है। जिसे जितनी जल्दी होती है, ग्राहक उतनी फुर्ती से काम करता है। इससे ग्राहक सेवा भी

अच्छी होतीं है और शिकायत भी नहीं रहती ।

स्टाफ की इस कुर्सी बदल सेवा के बदले उन्हें आफिशियेटिंग एलाऊंस मिलता है अर्थात ऊपर की आमदनी ।

इसलिए दांतवाला सभी की आखों के तारे हैं । सब की आखें उन्हीं पर टिकी रहती हैं ।

कोई उन्हें आराम की सलाह देता है तो कोई छींक आ जाने पर एल. टी. सी. लेकर गोआ घूम आने को उकसाता है । कोई वहां के सुन्दर तटों पर लेटी विदेशी सुन्दरियों का आंखों देखा हाल सुनाने लगता है । पर वे अपना डेंचर मसूड़ों के बीच मजबूती से दबाए केवल आनन्द ही लेते हैं छुट्टी नहीं लेते ।

यदि बैंक स्टाफ में प्रबंधक को ढूंढना हो तो बहुत आसान है । आप यदि बैंक में पौने दस पहुंच जायें तो सबसे पहले आया व्यक्ति मैनेजर ही होगा और सबसे लेट घर पहुंचने वाला भी वही होगा । जून और दिसम्बर के महीनों में जो टी. बी. के मरीज सा नजर आए समझ लें यही श्रीमान हैं । जिनके चेहरे से नूर एबसेंट हो वही प्राणी इस तंत्र में मैनेजर होता है ।

लेकिन दांतवाला उपरोक्त परिभाषा के बिल्कुल उलटे थे । इसका कारण यही था कि वे टैंशन को दूर रखते थे और सुन्दर चीजों के पुजारी थे ।

एक सुनहरा असूल था उनका । डिपाज़िट के पीछे नहीं भागते थे और लोन देने का नाम नहीं लेते । बैंक में सुखी रहने का इससे अच्छा और कोई अचूक फार्मूला नहीं है इस इंडस्ट्री में ।

एक बार एक ग्रमीण उनके पास भैंस का ऋण लेने आया । उससे पूछा । "तुमारे को भैंस का क्या करना ?"

वह बोला, "दूध बेचना सॉब ।"

"जमीन है ?"

"नहीं हजूर ।"

"तो भैंस खायेगा कहां से और दूध कइसे देगा ।"

"साब हम चारा बाहर से ले लेगा।"

"तो मंईंगा पड़ेगा न···तुम बैंक का किश्त कईसे लौटाएगा। तुम को कर्जा नईं मिल सकता।"

दूसरा ग्रामीण जब आया तो उससे पूछा, "क्या मांगता है?"

"साब भैंस खरीदने को लोन मांगता है।"

"जमीन है?"

"जी हां है।"

"कितना है?"

"चार कीले?"

"यूं मीन चार बीघा।"

"जी हज़ूर।"

"तुमको लोन नहीं मिल सकता।"

"क्यूं मेरे पास जमीन है हज़ूर।"

"इसलिए तो नईं मिलेगा।"

"लेकिन क्यूं?"

"तुम्हारा इनकम ज्यादा है गर्वमेंट का पालिसी नईं है।"

कायल होकर और कुछ पूछने की जुर्रत न करता।

जब वे कई ग्रामीणों को ये समझाते कि पैसा बैंक में हमेशा दो आदमियों के ज्वाइंट नाम में जमा कराना चाहिये तो उनके क्यूं पूछने पर सुबह-सुबह कहते, "कल को तुम मर जाएंगा तो तुम्हारा वाईफ किस-किस के आगे रोएंगा?"

ग्राहक के साथ आए आदमी भी एक बार मुंह बाए रह जाते और वे अपनी बात जारी रखते, "दोनों मर जाएगा तो तुम्हारा नामिनी को पईसा मिलेगा। हम उसका भी फार्म भर दिया।"

वेंकटा बाबू कई बार ज्योतिर्विदों के चक्कर काट चुके हैं, मद्रासी पंडितों से जन्म पत्रियां जंचवा चुके हैं लेकिन उनके हारस्कोप में चौथे घर में राहू की बजाए दांतवाला वक्री होकर क्रूर दृष्टि से देख रहे हैं।

तिरुपति के मन्दिर में भी काफी रुपये इसी चक्कर में चढ़ा आए हैं कि

प्रमोशन जल्दी हो।

दक्षिण के अन्य मन्दिर में भी पत्र की गारंटी दी जाती है। वेंकटा बाबू की आस्था है कि तरक्की इसी वर्ष होगी।

पर जब-जब दांतवाला को देखते हैं उनके हृदय में घंटे बजने शुरू हो जाते हैं और वे अपने दांत किट-किटा कर रह जाते हैं।

उधर झुनझुनवाला ने भी मंगलसूत्र की तरह एक ताबीज पहन लिया है जालन्धर के एक ज्योतिषी की बात मानकर। यह तन्त्र सुपर डीलक्स है और काफी महंगा है। काम न होने पर पच्चीस प्रतिशत कटौती के बाद पैसे वापिस।

कभी वह कैबिन को और कभी ताबीज़ को काम करते-करते देखती हैं।

एक दोपहर जब मैं पैसे निकलवाने बैंक गया तो चपरासी उबाऊ सिंह ने दांतवाला की कैबिन से ही वेंकटा बाबू को आवाज दी, सॉब···साब को कुछ हो गया हैं।

खजांची लक्ष्मी बाबू ने अपने कटघरे से ही टेलिस्कोपीय दृष्टि दौड़ाई और घोषणा कर दी, "हार्ट अटैक होगा।"

"हार्ट अटैक और साब को···!" दफ्तरी ने दांतवाला के बेहतरीन पास्ट रिकार्ड को मद्दे नजर रखते हुए लक्ष्मी बाबू को खलास कर दिया।

"तो ब्रेन हैमरेज हो सकता है," सुरक्षा गार्ड हवा सिंह ने गन का बट फर्श पर मारते हुए फोका फायर छोड़ा।

क्लर्क राम लुभाया ने हवा सिंह की बात को कुछ हवा देते हुए बात आगे खींची "भई हवा सिंह की बात में कुछ दम लगता है। क्लोजिंग के दिनों में कुत्तों की तरह डिपाजिट के लिए मारे-मारे फिरना पड़ा। अब डिपाजिट है कोई पापूलेशन तो है नहीं जो स्वयंमेव बिना कुछ किये बढ़जाएगी। मुलायम सिंह जैसे ही डाक अन्दर रखकर बाहर निकला तभी ये चक्कर आया होगा।"

चूड़ामणि ने भी अन्दाजा लगाया, "इस बार ब्रांच का टारगेट पूरा नहीं हुआ है। हैड आफिस से जरूर तगड़ा 'चूरन' आया होगा···तभी तो।"

वेंकटा अय्यर ने झट से फोन मिलाया टैक्सी वाले को। तब तक कैबिन में सारा स्टाफ हाथ बांधे टेबल के इर्द-गिर्द छा गया था।

दांतवाला लक्ष्मण मूर्च्छा स्टाईल में लम्बे पढ़े थे और वेंकटा बाबू हनुमान जी की मुद्रा में टेलीफोन पर संजीवनी अरेंज करने में जुटे थे।

नत्था सिंह जिसने पिछले हफ्ते ही बैंक से टैक्सी फाईनेंस करवायी थी और अभी पहली किश्त व पहली इंस्पैक्शन भी ड्यू थी दांतवाला को ढोने के लिए हाजिर हो गया।

दांतवाला के नथुनों से बिगड़ी हुई मोपेड के स्टार्ट होने जैसी फुर्र-फुर्र आवाज निकल रही थी।

कैश पीयन और रोकड़ियां, कैश के कारण बाहर नहीं आ सके। लेकिन बाकी सब प्रबन्धक महोदय को फौरन से पेश्तर हस्पताल में जमा करवाने को व्याकुल थे।

सारे स्टाफ सदस्यों ने उनकी जीवित देह को कंधा दिया और टैक्सी में ऐसे रख दिया मानो कोई गठरी हो।

ड्राईवर के साथ भूतालिंगम बैठा। बगल में मुलायम सिंह। पिछली सीट पर वेंकट बाबू दांतवाला का सिर अपनी गोदी में लिये बैठे और नत्थासिंह ने पूरे जोर से एक्सिलेटर दबा दिया। इधर चपरासी ने बार-बार बजने वाली घंटी की ओर ताकते हुए राहत की सांस ली।

मन ही मन वह सोचने लगा यदि दांतवाला साब पन्द्रह दिन भी पीं. जी. आई में लगा आवें तो दस रुपये डेली के हिसाब से, पी. एफ. वी. एफ. कटा-कटा कर नैट डेढ़ सौ का गेन है जिससे फैस्टीवल एडवांस की एक किश्त आराम से निकल जायेगी!

रामास्वामी तो दांतवाला के कुर्सी पर लुढ़कते ही क्लर्क बन बैठा था और अन्ना को सीट से उठाते हुए बोला था, "अन्ना जल्दी करो...साब को देखो इधर मैं कांऊटर संभालता हूं।

रामा स्वामी को यह विश्वास था कि यदि एक दो एन्ट्रीं भी लैजर में वह कर गया तो आफिशियेटिंग क्लेम कर लेगा भले ही बाद में अन्ना ही क्लीयरिंग के सारे चैक पोस्ट करे।

एक जने लेखाकार और दूसरे हैड क्लर्क की सीट पर जम गए।

टैक्सी पी. जी. आई. की ओर पूरी गति से दौड़ रही थी।

वेंकटा बाबू के मन में तिरूपति के मन्दिर जैसे घंटे बजने लगे और दारू वाला की भविष्यवाणी याद आने लगी. "इसी साल शुभ सूचना मिलेगी।"

दांतवाला की मुंदी आंखों की ओर ताकते हुए उन्होंने मन ही मन प्रार्थना की, "हे तिरुपति भगवान! यही लास्ट चाँस है···वरना इसी स्केल में रिटायरी लेनी पड़ेगी। ग्रैच्युटी भी कुछ नहीं बनेगी।"

तभी दांतवाला को न जाने कहां से होश आ गया।

कादरखानीय स्टाईल में उन्होंने डायलाग बोला "मैं कहां हूं···क्या हुआ अमकू···कहां लेकर जाता तुम अमकू?"

वेंकटा बाबू ने अपना दिल संभालते हुए उन्हें सांत्वना दी, 'कुछ नहीं सर कुछ नही···आपका तबियत कुछ खराब हो गया था···पीं. जी. आई. ले जाता जी।'

पी. जी. आई. का नाम सुनते ही दांतवाला पूरे होश में आ गए।

उन्हें साक्षात् यमदूत नज़र आने लगे। टैक्सी मध्य मार्ग पर दौड़ रही थी। हस्पताल कुछ मिनट ही दूर रह गया था।

वेंकटा बाबू एण्ड कम्पनी शीघ्रतम और द्रुतगामी सेवा में उन्हें एमरजेंसीं में भर्ती करा देना चाहते थे ताकि वे अन्तिम हवा वहां देश के कोने-कोने से आए डाक्टरी सीखते नौसिखियों के पंक्चर से ही निकलवाएं।

पी. जी. आई. का नक्शा, नर्से, डाक्टर, कैन्टीन वगैरा आंखों के आगे घूमते ही दांतवाला समझ गए···अन्त समय आ गया है।

लेकिन उनमें कुछ होश बकाया थे। वे बुड़बुड़ाये, "अमकू पी. जी. आई. नहीं ले जाना अम यहीं मरना पसंद करेगा। वहां नहीं जाएगा। अमकू खन्ना के नर्सिग होम में भर्ती होना मांगता।"

उनके इस तरह होश में आ जाने से सभी के चेहरों पर मुर्दनी छा गई। वे ठीक ठिकाने लगा रहे थे नैया पर···कार में आगे बैठे क्लर्क ने दांतवाला को समझाने की कोशिश की, "सर, जो फैसिलिटीज पी. जी. आई. में अवेलेबल हैं वह खन्ना कहां प्रोवाईड कर सकता है आपके लिए वहीं ठीक है सर···।"

लेकिन दांतवाला अड़े रहे खन्ना के हाथों शहीद होने।

बाबू धुलिया राम जो दांतवाला के हृदय की जबरदस्त मालिश कर रहे थे मन ही मन समझ गए "अच्छा। रीजनल आफिस खन्ने के क्लीनिक की प्रोपोजल भेजी है पिछले हफ्ते...तभी कहूं आज इस वक्त खन्ना साला कैसे याद आ गया। मेडीकल सर्टीफिकेट के बीस झटक लेता है। पूरे पैसे वसूलता है स्टाफ से। अब बनेगा इनफ्लेटिड बिल और सेंट-पर्सेंट बैंक से रीइबर्स्मेंट होगा।"

नत्था सिंह की गाड़ी पी. जी. आई. के आपात द्वार के समीप पहुंची ही थी कि दांतवाला की पुरजोर फरमाईश पर उसे डा० खन्ना के क्लीनिक की ओर मोड़ना पड़ा।

सूचना मिलते ही डा० खन्ना स्वागतार्थ कार के समीप आ गये। चार आदमियों की सहायता से उन्हें सीधा आप्रेशन थियेटर में रख दिया।

स्टेथेस्कोप से जगह-जगह दबा कर उन्होंने नर्स को इंजेक्शन तैयार करने के लिए कहा और लैब से दालमसिंह को बुला कर खून टैस्ट, पेशाब टैस्ट और कई अन्य टैस्टों के बारे में हिदायत दी।

आप्रेशन थियेटर के बाहर लाल बत्ती जगमगाते देख कई साथियों को सन्तोष हुआ कि चलो फिर भी ठीक ठिकाने पहुंच गये हैं लेकिन सरकारी हस्पताल दांतवाला के लिए अधिक बेहतर था। पिछले वर्ष साथ वाले बैंक प्रबन्धक को भी वहीं ले जाया गया था। फिर वापिस लाने की आवश्यकता नहीं पड़ी थी।

नर्सिंग होम के फोन पर "मैनेजर दांतवाला कैसे हैं ?" बार-बार पूछ रहा था। शाम तक कमरा नम्बर 13 के सामने बैंक के सभी ग्राहक जमा हो गए जिन्होंने भैंस तक के ऋण लिये थे।

कमरे के दरवाजे पर 'डू नाट डिस्टर्ब' की फट्टी लटक रही थी। बाहर स्टाफ के सदस्य 'दर्शन दो घनश्याम नाथ...' मुद्रा में खड़े थे।

मिसेज झुनझुन वाला अपने पति बाटलीवाला के साथ ठीक मीरा की पोज़ में शाल ओढ़े खड़ी थीं मानो चौथे पर आई हो।

आयतित सेंट से भीगे रुमाल से बड़ी सावधानी से बार-बार छलक आने

वाले आंसुओ को मैक्सफेक्टर के आईलाईनर से बनी लक्ष्मण रेखा के पीछे धकेलने की कोशिश कर रही थीं वह वरन् अकारण ही मुंह काला हो जाने का भय था। मिस्टर बाटलीवाला भी उसे ढाढ़स बंधा रहे थे जबकि भीतर से उन्हें मिसेज झुनझुन का इस कद्र सेंटीमेंटल होना जरा भी नहीं भा रहा था।

उबाऊ सिंह कमरे का नम्बर 13 देख कर ही आश्वस्त हो गया। "चलो कमरा ठीक मिला" सोचकर तेरहवीं की रूप रेखा बनाने लगा। साथ ही श्रीमती दांतवाला को भी मक्खन लगाने का सुअवसर हाथ से नहीं जाने दे रहा था "साब को कुछ भी तो नही हुआ मैडम···बस हल्का सा ही तो चक्कर आया था। ये तो हमने बड़ी जल्दी संभाल लिया। शाम तक घर पहुंच जायेंगे··· आप चिन्ता क्यूं करती हैं मैडम···ही इन ओके···हम सब के होते आपको वरी करने का क्या जरूरत है?"

दफ्तरी का विचार था कि उप प्रबंधक वेंकट बाबू ही अब दांतवाला की कुर्सी पर विराजमान होंगे स्थाई रूप से। जहाँ तक कोई और दांतवाला की जगह नहीं आता तब तक अपना मीटर चालू रहेगा।

कुछ ग्राहक जिन्होंने क्लीन ओवरड्राफ्ट दांतवाला से बिना किसी जमानत और फार्म भर लिये थे बार-बार खन्ना नर्सिग होम पर फोन घुमा-घुमा कर प्रबन्धक महोदय का हाल-चाल पता कर रहे थे।

गड़बड़ लाल एण्ड कम्पनी के प्रोप्राईटर यह सुनकर "अभी हालत नाजुक बनी हुई हैं" आराम से बैठ गए और बैंक जाते मुनीम को रोक लिया, "पीसे जब दांतवाला कहेगा तभी जमा कराईयों···इबी गल्ले मां रख दे।"

लटूरी सिंह का विचार था पी. जी. आई. होता तो कुछ पक्के तौर पर कहा जा सकता था अब ये तो प्राईवेट इलाज है भैया का कह सकते हैं।" कह कर बीड़ी का धुआ छोड़ा।

बैंक में अगले दिन सभी एक-एक सीट और एक-एक पद आगे खिसक चुके थे।

वेंकटा बाबू प्रबन्धक की कुर्सी पर झूल रहे थे, झूम रहे थे और ग्राहकों

से सेवामय मुस्कान के साथ बतिया रहे थे।

ग्राहक लैजर, चैक, रजिस्टर आदि स्वयं ढो रहे थे। चपरासी दफ्तरी की कुर्सी पर बैठे बाऊचर सी रहा था, फाईलिंग कर रहा था। आज जनाब दफ्तरी थे अतः अन्य कर्मचारियों को पानी-वानी पिलाना उनकी ड्यूटी में नहीं था।

क्षेत्रीय प्रबंधक ने दांतवाला की ताजा स्थिति जानना चाही और च··· च···च···करके फोन रख दिया।

"जब भी फोन की घंटी बजती सभी सतर्क हो जाते। सब की आंखें ग्राहकों या लैजर पर थी पर कान फोन पर लगे हुए थे मानो देश के किसी प्रिय नेता के अकाल चले जाने का समाचार बस आने वाला ही है।

वेंकट बाबू ने डा० खन्ना से उनका हाल-चाल पूछा और 'डेलीकेट' सुन कर हैल्थ बुलेटिन पूरे हाल में प्रसारित कर दिया।

इस समाचार से सभी की जान में जान आ गई।

वेंकट बाबू प्रबंधक वेतनमान में फिटमेंट होने पर कितना लाभ होगा, इसकी फिगर निकालने के लिए कैल्कुलेटर की जान निकाले जा रहे थे। कभी सर्कुलर मंगाकर डी. ए. का रेट देखते तो कभी प्रमोशन पालिसी पढ़ते।

"यदि मद्रासी पंडित की भविष्यवाणी सही हो गई तो प्लाट की अन्तिम किश्त उपर से ही निकल जायेगी। पेट्रोल का खर्चा काट एलाऊंस, लीज्ड अकोमोडेशन, फर्नीचर वगैरा सब की एंटाईटलमेंट हो जाएगी।" इसी उधेड़-बुन में उनकी सिगरेट का पैकेट लंच टाइम से पहले ही समाप्त हो गया।

रामलुभाया के मासिक भविष्य में तो लिखा ही था, "कार्य में सफलता, सितारा लाभ वाला, धन लाभ, इरादों में कामयाबी, नये अवसर बनेंगे, सरकारी कामकाज बेहतर, शत्रु नाश···आदि।" वह पूरी तरह संतुष्ट था। मन ही मन उसने वैष्णों देवी को एक झंडा सैंक्शन कर दिया।

ऊबाऊ सिंह अपनी अष्ट धातु की अंगूठी बार-बार देख रहा था। अंगूठी का चमत्कार तो पहले हफ्ते ही नजर आ गया जबकि भाटड़े ने तो 41 दिन का समय बताया था। कार्यकारी रूप में काम करने से ऊपर की आय हो

रही थी।

क्लीयरिंग क्लर्क बाबू रामलाल स्टेट बैंक के क्लीयरिंग हाऊस जाते समय एक चक्कर नर्सिग होम भी लगा आता और बैंक में आकर ताजा समाचार देता।

जिस दिन दांतवाला की हालत ठीक होती बैंक में सभी की खराब हो जाती।

बैंक में यूं तो काम बढ़िया चल रहा था पर कोई पक्की खबर न आने से अनिश्चितता का वातावरण निरन्तर बना हुआ था जिससे कुछ मजा नहीं आ रहा था।

एक दिन रामलुभाया पान चबाने की हुड़क से बाहर निकला पर पान वाले चौरसिया की बजाए साईकल नर्सिंग होम की ओर दोंड़ा दी।

दूर से देखा कुछ गड़बड़ है। नर्सिंग होम के आगे भीड़ है। कुछ रोने-की स्वर लहरिया भी उभर रही हैं। नर्सिंग होम के बाहर बैठे चाय वाले से पूछने पर पता लगा, कोई मैनेजर था। बेचारा पिछले हफ्ते ही आया था...।

साईकिल को मोटर साईकिल की तरह अमिताभ अन्दाज में घुमाया और शुभ समाचार वेंकट बाबू को सुनाने के लिए तूफान की तरह भागा।

उसे पवन दूत की तरह कैबिन में घुसते ही देख सभी कर्मचारी भी एक दूसरे के पीछे दौड़कर कैबिन में धड़ा-धड़ गए।

फूले हुए सांस में अभी वह आधी बात ही बता पाया था कि लिफाफा देख कर मजबून जान लेने वालों के लिए इतना ही काफी था।

खुशी की एक लहर सी दौड़ गई काऊंटर पर।

शाखा में सभी उनकी उड़ान का समय निश्चित करने लगे। काम-काज ठप्प हो गया। बैंक का शटर राष्ट्रीय झंड़े की तरह आधा झुका दिया गया।

मिसेझ झुनझुनवाला ने एक बार फिर छलक आए आंसुओं को आई लाईनर से पीछे धकेल दिया।

वेंकट अय्यर ने मास्टर हवेली राम वाली मुखमुद्रा ओढ ली। सभी के मुखमंडल गमगीन हो गए पर एक दबी-दबी सी हूक अन्दर उठ-उठ कर गुद-

गुदा रही थी। मिस गोयल को वैसे भी ग्राज कहीं जल्दी जाना था।" हाफ डे लीव बची" सोच कर उसने एक फोन मिलाया।

सभी महत्वपूर्ण तथा विशेष ग्राहकों को दुखद समाचार दे दिया गया ग्रौर शौभायात्रा का सम्भावित समय बता दिया गया।

फिर भी वेंकट बाबू ने सोचा, डा० खन्ना से बात कन्फर्म कर ली जाए कहीं बाबू जगजीवन राम या बाबू जयप्रकाश वाली बात न हो जाए।

उन्होंने नर्सिंग होम का नम्बर मिलाया उधर रिसैप्शनिस्ट ने हरी झंडी दी, छुट्टी कर गया।"

वेंकट बाबू का मन उस सुरीली ग्रावाज के मुंह में घी शक्कर डालने को मचल गया पर फोन का रिसीवर चूम कर ही सब्र करना पड़ा। वे इतने उत्साहित थे कि यदि यह सूचना देने वाली सामने होती तो गड़बढ़ हो जाती।

सभी के चेहरों से नूर टपक रहा था; सबके कंप्यूटर डैटा फीड कर रहे थे ग्रौर ग्रपनी-ग्रपनी उधेड़बुन में थे।

बैंक को दो बजे ही ताला लगा दिया गया।

ग्राहक, कर्मचारी, ग्रन्य ग्रधिकारी नर्सिंग होम के ग्रागे जमा हो रहे थे। रोना-धोना पूर्ववत चल रहा था।

डा० खन्ना ग्रपनी एंबुलेंस से उतरे। वेंकट बाबू को देखते ही उचके ग्रौर तपाक से हाथ मिलाया।

"ग्रापके मैनेजर साहब को तो छुट्टी दे दी है⋯सैक्रेट्री ने फोन पर बताया तो था," खन्ना ने कहा।

"तो मरा कौन ?" वेंकट ग्रय्यर ने मुंह फाड़ा।

"ग्रार. के. इंडस्ट्रीज का मैनेजर।"

पास खड़े, वेंकट बाबू को चार कर्मचारियों ने उठाकर तत्काल वहीं भर्ती करवा दिया।

□

यात्रा

शिमला जाने वाली बस छूटने में पांच-सात मिनट बाकी थे ! कुछ सवारियां बैठी थीं । कुछ लोग टिकट की लाईन में लगे थे, कई बिना टिकट बैठे थे, कुछ इस प्रतीक्षा में बस के दरवाजे के बाहर खड़े थे कि जो बस जल्दी चल पड़ेगी, उसी में बैठ जाएंगे । बाहर इन्तजार करने वाली सवारियां दैनिक यात्रियों की श्रृंखला में ग्राती थी जिनके कन्धों पर लगभग एक ही ग्राकार के बैग लटके होते या हाथों में लंच बाक्स पकड़े होते ।

लम्बे रूट की बसों में कुछ कंडक्टर दैनिक यात्रियों को चढ़ने नहीं देते क्योंकि जगह-जगह बस रोकनी पड़ती है तो कुछ बुला-बुला के चढ़ाते हैं । इन से फिफ्टी-फिफ्टी चलता है । गंतव्य से कुछ पहले टिकट काट देता है या फिर न भी काटे । सवारी पकड़े जाने पर स्वयं जिम्मेदार है ।

चूंकि बस ग्रन्तिम थी, शिमला के लिए, ग्रतः ग्रधिकांश यात्री वहीं के थे तथा टिकट लेकर ही बैठे थे । लोग चढ़ रहे थे । ग्रपना-ग्रपना सामान सीट के नीचे फंसा रहे थे या सीटों के ऊपर लगे कैरियर में ग्रटका रहे थे ।

एक मोटे ब्रीफकेस को ज़बरदस्ती कैरियर पर ठूंसते देख, उसके नीचे बैठे एक बुर्ज़ुग ने सवारी को समझाते हुए कहा, "सरदार जी ! इसे नीचे ही रख लो बस झटका मारेगी तो गिर पड़ेगा ।"

"तुस्सी फिकर न करो बादशाहो···पूरी तरां फिट है···नई गिरदा···चंगी तरां फंसा दित्ता ए ।"

"गिर गया तो सिर ग्रपना फूटेगा, सरदार का क्या जाएगा···? ग्राप तो

पीछे बैठ गया है," सोचकर सीट बदल ली।

ड्राईवर बाहरी शीशे पर कपड़ा फेर-कर एक ओर खड़ा हो गया। उसके बार-बार घड़ी देखने से लग रहा था। बस चलने वाली है।

एक महिला अन्दर आई।

"मेरी सीट है···मेरा ब्रीफकेस ऊपर रखा है," वह बोली।

"सीट खाली देखकर मैं बैठ गया···अब आपका सामान ऊपर पड़ा है तो मुझे क्या पता···पर्स या अखबार वगैरा कुछ रखा होता तो पता चलता," बैठे व्यक्ति ने कहा।

"बोहतियां गल्लां न बणां···पासे हो," कहकर वह धम्म से सीट पर जम गई। वह व्यक्ति खिसिया कर एक ओर खिसक गया। बस इतनी सी बात से शिमला जाने की उमंग फीकी सी पड़ गई।

"शिमला···सोलन···शिमला सोलन···रास्ते की सवारी कोई न बैठे। फिर न कहना उतार दिया। "कंड़क्टर चिल्लाने लगा। एक बार वह बोलता तो दूसरी बार कुली दोहराता।

कंडक्टर कीं धड़ल्ले वाली आवाज़ से कमजोर दिल सवारियां उतर कर लोकल बस में जा चढ़ी। ढीठ और दैनिक यात्री तटस्थ रहे। बल्कि और यात्री भरते गये।

ड्राईवर अपनी खिड़की की बजाय अगली खिड़की से सवारियों को धकियाता हुआ चढ़ा। सीट पर कम्बल जमाया। डैश बोर्ड पर रखे कपड़े से शीशा साफ किया। उंगलियों से क्रास की शक्ल में दोनों कानों को छुआ, छाती को हाथ लगाया, आखें बन्द की और स्टेरिंग को माथा टेका। शीशे में अपनी शक्ल देखते हुए पगड़ी ठीक की; कानों से झांकते बालों को उंगली से खोंसा और शीशे में झांक कर पीछे बैठी सवारियों का निरीक्षण करने लगा।

सोलह और सत्रह नम्बर सीटों पर एक आकर्षक नवविवाहित जोड़े को देख उसे सन्तोष हुआ। और नजर दौड़ाने पर चार पांच 'अच्छी' सवारियां नजर आ गईं जिनके सहारे सफर मजे से कट जाता है। सीधी सड़क और कम यातायात वाले क्षेत्र में इस दर्पण का उन्नित प्रयोग कर लेता है।

कंडक्टर की सीटी की प्रतीक्षा किये बिना ही उसने क्लच दबाकर गियर बदल दिया। झटके से बस खिसकी व घुर्र-घुर्र करने लगी।

कुछ यात्री एक दूसरे पर लुढ़के। दैनिक यात्री सिद्धस्त खिलाड़ी की तरह यथावत रहे पर कुछ अनाड़ी हल्की सी चोट से न बच सके।

इंजन चालू था। जागीर सिंह शीशे में उड़ती नजर से कुछ महिला सवारियों की ओर देख रहा था। एक से आंखें टकराने पर उसने ध्यान पिछले रास्ते चढ़ती सवारियों पर केन्द्रित कर दिया और हार्न बजाने लगा।

"अग्गे इन्ना समाण किस दा है ?" ड्राईवर ने फ्रंट सीट पर बैठी सवारी की ओर मुंह किया।

"अपना नहीं।"

एक हाथ स्टेयरिंग पर रखे, गर्दन घुमाकर उसने ऊंची आवाज में फिर वही दुहराया। 52 नम्बर पर बैठा एक कवाड़ीनुमा व्यक्ति चिल्लाया "मेरा है...मेरा है।"

"आह गड्डी है या ट्रक ? उप्पर रखदांदे शर्म आंदी ए ?" ड्राईवर चिल्लाया और इंजन बन्द कर दिया जो कुली के लिए स्पष्ट संकेत था। कुली ने बिना पूछे उसके थैले समेत समान ऊपर पहुंचा दिया और अन्दर हाथ फैला कर बोला, "पांच रुपये।"

एक अपराधी की तरह उस कबाड़ीनुमा आदमी ने पांच रुपये देकर पीछा छुड़ाया।

"चलिए बालम ?"

बालम ने सीटी बजा दी जवाब में और जागीर सिंह ने स्विच पर हाथ मारा। इंजन में हल्की सी सुरसुराहट हुई पर स्टार्ट न हुआ।

"सैलफ नईं चुकदी...," कहते हुए उसने बोनट का ढक्कन खोला और एक लाठी से नट पर चोट की। इंजन घुर्रघुराने लगा। गर्मागर्म हवा से बस का वातावरण दुर्गन्धमय होने लगा। सबसे अधिक पछता रहे थे फ्रंट सीट पर बैठे वे सज्जन जिनके साथ हरा थैला लटकाये, जागीर सिंह का सहयोगी पीठ लगाये उससे बातें मार रहा था।

बस खिसकती रही, सवारियां चढ़ती रहीं। अगले दरवाजे के साथ बैठे सज्जन बार-बार दरवाजा खोलने बन्द करने में परेशानी अनुभव कर रहे थे। एक सवारी को गेट के पास आकर पता चला कि बस दिल्ली नहीं अपितु शिमला जा रही है तो ड्राईवर चिल्लाया। "बाउ अक्खां ने जा डोडे ? पढ़े लिखे हो···रोडवेज ने इन्ना मोटा-मोटा लिखियां है अग्गे···हुण मार वी छाल छेदी···असां अग्गे वी टाईम चुकणा हुंदा है।"

वे सज्जन औंधे मुंह गिरते-गिरते बचे। इस हड़बड़ी में दरवाजा बन्द करना किसे याद रहता !

ड्राईवर ने दरवाजे वाली सवारी को डांट मारी, "बाऊ हुण बारी लाण कोई बाहरों आऊ ?"

"इस गेट कीपरी से तो बीच में खड़ा होना भला···, कमबख्त कमला हिदायतें देने में इतना समय न लगाती तो अच्छी भली पिछली सीटें मिल जातीं," उन्हें पत्नी पर गुस्सा आ गया।

बस में जितनी सवारियां बैठी थी लगभग उतनी ही खड़ी थीं। गेट के बाहर निकलते ही जागीरे ने गद्दी पर तिरछा बैठ कर पूरी तरह रेस दे दी और दफ्तरों से छुट्टी कर आई साईकलों, स्कूटरों और कारों की कतारों के बीच पीं-पों करता हुआ वह उद्योग पथ पर दौड़ने लगा।

बालम ने टिकटों का सिलसिला आरम्भ कर ही दिया था। नजदीक जाने वाली स्थानीय सवारियों से फ्लैट रेट ले रहा था।

औद्योगिक क्षेत्र आते ही, बस बजाए शिमला वाली सड़क पर मुड़ने के दिल्ली वाली सड़क पर दौड़ने लगी तो बहुत सी सवारियां एक दूसरे को पूछने लगी, "ये बस दिल्ली तो नहीं जा रही, बोर्ड तो शिमले का ही लगा है।"

कंडक्टर ने तुरन्त उत्तर दिया, "वर्कशाप जा रही है डीजल लेने।"

"आधा घंटा और लेट समझो···पहले ही बीस मिनट लेट चली है," तीस नम्बर पर बैठा एक पैसेंजर बुदबुदाया।

''तो क्या बिना डीजल के चलें ?'' बालम ने प्रश्न दागा। पैसेंजर बोला, ''तो अड्डे पर आने से पहले डलवाना था।''

''अभी-अभी मनाली से आकर बैठे थे···शियले वाली गडड्ी रस्ते में खराब है···हमें आर्डर हुआ···पता नहीं किस भैंडी सवारी का सवेरे मुंह दिखा···खाना भी नसीब नहीं हुआ,'' बालम ने सफाई दी।

वर्कशाप पहुंचते ही चालक अपने यारों दोस्तों को गले मिलने लगा। बालम डयूटी रूम में चला गया।

सवारियां वेताबी से दोनों को ढूंढ़ने लगी। निकट जाने वाले अधिक आतुर थे। ''अब तक 30 नम्बर में कब का घर पहुंच जाना था,'' टिफिन उठाए एक सरकारी कर्मचारी ने दूसरे से व्यथा व्यक्त की।

चालक को बस की ओर आते देख कर आगे बैठे लोग हल्की आवाज में बोले, ''आ गया।''

जगीरा बस में चढ़कर सीट पर बैठ गया और घोषणा करने लगा, ''एह बस खराब है···सत्तर उनताली जाऊगी···सारे छेती करी वीर···शाबाश।''

एक खलबली सी मच गयी अन्दर। खड़ी सवारियां तत्परता से उतर कर दूसरी बस में बैठ गईं। सामान व बच्चे वाले यात्री उठापटक करने लगे। बैठी सवारियों को खड़ा होना पड़ा। जिसे जहां जगह मिली बैठ गया। बस का आकार पिछली वाली से भिन्न था अतः सीट नम्बर भी भिन्न मिन्न थे। किसी की खिड़की वाली सीट छूट गई तो किसी की आगे वाली।

''अब तक बस अड्डे से साला ठीक-ठाक आया···यहीं आकर खराबी का पता चला।''

''अच्छा है यहीं पता चला रस्ते में होती तो मुश्किल हो जाती।''

''सरकारी काम ऐसे ही चल रहा है भाई साहब···कोई पूछने वाला तो है नहीं। मर्जी का मालिक है यह विभाग।''

''एमरज़ेंसी बढ़िया थी···सब काम वक्त पर होता था। बसें भी खराब नहीं होती थीं···मैं तो कहूं दुबारा लग जानी चाहिए, कम से कम आम आदमी तो खुश था।''

बस खिसकती रही, सवारियां चढ़ती रहीं। अगले दरवाजे के साथ बैठे सज्जन बार-बार दरवाजा खोलने बन्द करने में परेशानी अनुभव कर रहे थे। एक सवारी को गेट के पास आकर पता चला कि बस दिल्ली नहीं अपितु शिमला जा रही है तो ड्राईवर चिल्लाया "बाउ अक्खां ने जा डोडे ? पढ़े लिखे हो...रोडवेज ने इन्ना मोटा-मोटा लिखियां है अग्गे...हुण मार वी छाल छेदी...असां अग्गे वी टाईम चुकणा हुंदा है।"

वे सज्जन औंधे मुंह गिरते-गिरते बचे। इस हड़बड़ी में दरवाजा बन्द करना किसे याद रहता !

ड्राईवर ने दरवाजे वाली सवारी को डांट मारी, "बाऊ हुण बारी लाणा कोई बाहरों आऊ ?"

"इस गेट कीपरी से तो बीच में खड़ा होना भला..., कमबख्त कमला हिदायतें देने में इतना समय न लगाती तो अच्छी भली पिछली सीटें मिल जातीं," उन्हें पत्नी पर गुस्सा आ गया।

बस में जितनी सवारियां बैठी थी लगभग उतनी ही खड़ी थीं। गेट के बाहर निकलते ही जागीरे ने गद्दी पर तिरछा बैठ कर पूरी तरह रेस दे दी और दफ्तरों से छुट्टी कर आई साईकलों, स्कूटरों और कारों की कतारों के बीच पीं-पों करता हुआ वह उद्योग पथ पर दौड़ने लगा।

बालम ने टिकटों का सिलसिला आरम्भ कर ही दिया था। नजदीक जाने वाली स्थानीय सवारियों से फ्लैट रेट ले रहा था।

औद्योगिक क्षेत्र आते ही, बस बजाए शिमला वाली सड़क पर मुड़ने के दिल्ली वाली सड़क पर दौड़ने लगी तो बहुत सी सवारियां एक दूसरे को पूछने लगी, "ये बस दिल्ली तो नहीं जा रही, बोर्ड तो शिमले का ही लगा है।"

कंडक्टर ने तुरन्त उत्तर दिया, "वर्कशाप जा रही है डीजल लेने।"

"आधा घंटा और लेट समझो...पहले ही बीस मिनट लेट चली है," तीस नम्बर पर बैठा एक पैसेंजर बुदबुदाया।

"तो क्या बिना डीजल के चलें ?" बालम ने प्रश्न दागा। पैसेंजर बोला, "तो अड्डे पर आने से पहले डलवाना था।"

"अभी-अभी मनाली से आकर बैठे थे···शियले वाली गड्डी रस्ते में खराब है···हमें आर्डर हुआ···पता नहीं किस भैंडी सवारी का सवेरे मुंह दिखा···खाना भी नसीब नहीं हुआ," बालम ने सफाई दी।

वर्कशाप पहुंचते ही चालक अपने यारों दोस्तों को गले मिलने लगा। बालम ड्यूटी रूम में चला गया।

सवारियां वेताबी से दोनों को ढूंढ़ने लगी। निकट जाने वाले अधिक आतुर थे। "अब तक 30 नम्बर में कब का घर पहुंच जाना था," टिफिन उठाए एक सरकारी कर्मचारी ने दूसरे से व्यथा व्यक्त की।

चालक को बस की ओर आते देख कर आगे बैठे लोग हल्की आवाज में बोले, "आ गया।"

जगीरा बस में चढ़कर सीट पर बैठ गया और घोषणा करने लगा, "एह बस खराब है···सत्तर उनताली जाऊगी···सारे छेती करी वीर···शाबाश।"

एक खलबली सी मच गयी अन्दर। खड़ी सवारियां तत्परता से उतर कर दूसरी बस में बैठ गई। सामान व बच्चे वाले यात्री उठापटक करने लगे। बैठी सवारियों को खड़ा होना पड़ा। जिसे जहां जगह मिली बैठ गया। बस का आकार पिछली वाली से भिन्न था अतः सीट नम्बर भी भिन्न भिन्न थे। किसी की खिड़की वाली सीट छूट गई तो किसी की आगे वाली।

"अब तक बस अड्डे से साला ठीक-ठाक आया···यहीं आकर खराबी का पता चला।"

"अच्छा है यहीं पता चला रस्ते में होती तो मुश्किल हो जाती।"

"सरकारी काम ऐसे ही चल रहा है भाई साहब···कोई पूछने वाला तो है नहीं। मर्जी का मालिक है यह विभाग।"

"एमरजेंसी बढ़िया थी···सब काम वक्त पर होता था। बसें भी खराब नहीं होती थीं···मैं तो कहूं दुबारा लग जानी चाहिए, कम से कम आम आदमी तो खुश था।"

ऐसे ही कई टिप्पणियाँ लगभग सभी सीटों पर चलने लगीं । मौसम से लेकर···पंजाब की हत्याओं तक···धर्म से राजनीती तक···पंडितों से लेकर रजनीश तक···"

बालम ने बाएं हाथ में टिकट की गड्डी संभाली और कूदता, फांदता, धकियाता, लड़ता, झगड़ता, पैसे पकड़ता और टिकट पकडाता चलने लगा ।

"शिमला ।"

"पचास पैसे खुले दो बहन जी ।"

"कालका तीन ।"

"साढ़े दस···अठन्नी खुली ।"

"है नहीं ।"

"ये लो रुपया···अठन्नी इनको दे देना ।"

"पिंजौर ।'

"सरदार जी इतनी अठन्नियां नहीं कि सारी सवारियों को बांटता फिरूं···सुबह पचास रुपये की रेजगारी लेकर चला था···इस वक्त," हरा थैला ऊपर को उछालते हुए बालम पैसे ढूंढने लगा ।

कई टिकटों के पीछे उसने बकाया राशि लिख दी । एक यात्री को रुपया लौटाते हुए वह बोला, "अठन्नी इनको दे देना ।"

जिन्हें अठन्नी लौटानी थी वे खिड़की से झांक-झांक कर चंडीमन्दिर की छावनी देखते रहे । जिन्होंने अठन्नी लेनी थी वे "मिलेगी भीं या नही···या गई" सोचकर यात्रा का मजा किरकिरा कर रहे थे ।

निकट की सवारियों को वह उतारते समय कहता, "लांग रूट की गाड़ी है···देर न करें···छलांग मार···बिठा लिया तो चौड़ा मत होवे···खुल्ले पैसे रखा कर···घर वाली ने मना किया के ?"

कालका आते ही चढ़ने वाले पैसेंजर चलती बस में ही लटक गये क्यूंकि यहां से भी यह अन्तिम बस थी । उतरने वाले अन्दर ही रह गये फुर्ती वालों ने सीटें रोक ली । अटैचियों से किसी का सिर फूटा तो किसी का कान रगड़ा गया । किनारे वाली सवारियों की दशा अधिक खराब थी । जो भी चढ़ता या

उतरता उन्हें रगड़ता जाता। जहां सामान रखा होता वहां पैर उठा कर चलने से जूते की चोट उनके पैरों में लगती। किसी का 'हिप' किसी के वक्ष से टकराता तो किसी के गाल से हाथ।

अंधेरा गहराने लगा। दिसम्बर का अन्त। हिमपात देखने की लालसा लिए कई पर्यटक···कई नव विवाहित जोड़। आवश्यक कार्य से सफर करते कई अधेड़ और कई बूढ़े। परवानू तक पैदल जाने वाली सवारियों से बस भर गई। अजीब सी उमस, ठंड के बावजूद भर गई थी।

पैसेंजर ड्राईवर-कंडक्टर की राह देख रहे थे वड़ी बेसब्री और बेबसी से।

जैसे ही ड्राईवर आया पहले से उबल रहे एक सज्जन भड़क उठे, "सरदार जी···क्या घर की बस बना रखी है आपने···? कोई वक्त की पाबंदी नहीं··· चंडीगढ़ से चले तो वर्कशाप **में** हमें परेशान किया। आधा घंटा लगा दिया। क्या सवारियों ने घर नहीं पहुंचना ? कईयों ने गांवों में पैदल जाना है। हमारे वक्त की कोई कीमत नहीं···कोई पूछने वाला ही नहीं···हद हो गई है···।"

"चाह वी न पीईये?" कहकर उसने इंजन चालू कर दिया।

बुजुर्ग के साथ एक-दो और भी बोलने लगे। जागीरे का सिर वैसे भी चकरा रहा था। इस हफ्ते रैस्ट नहीं मिला। मनाली की थकावट उतरी नहीं थी। फिर भी वह कुछ ठंडे दिमाग से बोला, "तुस्सी शिमले पहुंचना है जां नईं ?"

"ऐसे पहुंचेंगे शिमले···घंटा-घंटा हर जगह लगा कर···" एक अन्य सज्जन बोले, "लाईये कम्पलेंट बुक दीजिये···सात बजे का टाईम है चलने का साड़े आठ यहीं हो गए हैं···।"

"तने बस में जाना है या कम्पलेंट बुक पर ?"बालम ने जागीरे का पक्ष लिया।

उसने इंजन बन्द कर दिया बोला, "पहले शकैत लिख लेण दे इस गर्वनर नूं···फिर देखदें हैं।"

"हद हो गई···अब आप बदमाशी दिखा रहे हैं, चोरी और सीना जोरी··· पहिए पर बैठी सवारी चिल्लाई।

"ग्रोह छोड़ो बाबू जी...ड्राईवर नजदीक है या ट्रांसपोर्ट मिनिस्टर··· ग्राखिरी बस है···झगड़ा बढ़ गया तो सब लटक जायेंगे। मेरी पेशी है सवेरे हाईकोर्ट में···" एक यात्री दूसरे से बोला।

सवारियों ने स्थिति बिगड़ते देख ड्राईवर का साथ दिया। बुजुर्ग को थामा। ड्राईवर को सहलाया, तो गाड़ी चली। वातावरण जितना बाहर ठंडा था ग्रन्दर उतना ही गर्म। चढ़ाई में इंजन की ध्वनि ग्रौर तेज हो गई। लोग बतिया रहे थे पर बातें समझ नहीं ग्राती थी।

हलकी बूंदा-बांदी ग्रारम्भ हो गई। परवानू में सवारियां उतार कर बस नान स्टाप हो गई। धर्मपुर पहुंचते-पहुंचते हल्की बूंदा बांदी होने लगी।

जागीरे को कहीं से सिग्रेट की दुर्गंध ग्रा गई। सबसे पिछली सीट पर पी रहा था कोई सर्दी से जूझने को।

"ग्रोए कौण है ग्रगरबत्ती वाला?" कहकर उसने बस को तगड़ा ब्रेक मार के झटका दिया। इसके दो फायदे हुए। सिगरेट बाहर फेंक दी गई ग्रौर फ्रंट सीट पर ऊंघता यात्री शीशे से टकराया, "बाऊ जी सोणा है ते पिच्छे चले जाग्रो···दिखदा नी उत्ते की लिखिया है, कहते हुए पुनः बस चलाई।

सिग्रेट के धुएं से वातावरण दूषित था। जागीरे का दिमाग ग्रौर गर्म हो गया।

बर्फ के फातहे पड़ने ग्रारम्भ हो गए चढ़ाई में ही। मोड़ काटते ही सवारियां एक दूसरे पर गिर पड़तीं। जो महिलाग्रों के समीप बैठे थे उन्होंने खुद को ढीला छोड़ दिया ग्रौर बार-बार ग्राते मोड़ों पर सर्दी दूर करने लगे। किनारे बैठी सवारियां जागीरे की ड्राईवरी से परेशान थीं। बार-बार गिरती।

एक तीखे मोड़ पर सरदार जी का ब्रीफकेस उड़न तश्तरी की तरह उड़ता हुग्रा नीचे बैठे सज्जन की खोपड़ी पर पड़ा। उसने सिर सहलाते ब्रीफ केस उठाया ग्रौर ग्रौर सोए हुए सरदार जी पर दे मारा जिसका परिणाम गाली निकला। इससे माहौल ग्रौर गर्मा गया।

बस की खिड़कियां ढीली थीं। बार-बार खिसक जाने से स्नोफ्लेक्स ग्रन्दर ग्राने लगे। पिछली सीट पर बैठे पैसेंजर उसे बार-बार बन्द करते या पकड़ कर बैठते। खिड़की के मोह में बैठी सवारियां ग्रब पछता रही थी।

बीच में सेंडविच बने यात्री अधिक मजे में थे। दो-दो सवारियों से ठंड रुकी थी। टेक लगाने के लिए भी अच्छा था सर्दी में बीच की सीट का अपना ही चार्म है।

फ्रंट सीट पर बैठी सवारी, फ्रंट सीट की सवारी का कर्तव्य पूरा कर रही थी। ड्राईवर की उलजलूल बातों में हां मिलाना, पलकें न झपकाना, डिपर का प्रयोग न करने वालों को जागीर सिंह द्वारा दी गई गाली का अनुमोदन करना, स्टाप आने पर चाय पूछना, शीशा बार-बार साफ करना, सामने आते वाहन की पूर्व सूचना देना, रोड़वेज के अधिकारियों द्वारा शोषण के खिलाफ बातें करना आदि-आदि...।

बादलों में अदभुत चमक थी। वर्फ के फाहे शीशों पर जमने लग गये। बस की चाल धीमी पड़ गई। हैडलाईट के प्रकाश में स्नोफ्लेक्स स्वर्णिम लग रहे थे। कुछ दूर ही का रास्ता नजर आता था।

बर्फ तेजी से पड़ने लगी। जागीरे नेब स को साईड में लगा दिया। सभी के मन आशंकित हो गए। शीशों पर अन्दर से वाष्प जम गए।

"चलने का मुहुर्त ही गलत हो जाय तो ऐसा ही होता है...देखो वाहे गुरू पहुंचाएगा," सरदार जी ने श्वास छोड़ा।

हवा भी तेज हो गई। तुफान बर्फानी हो गया। "कौन सी जगह है ?" किसी ने पूछा। "जगह-वगह कोई नहीं, बड़ोग और सोलन के बीच हैं," तेरह नम्बर पर बैठे ने बताया।

नवविवाहित जोड़ा एक दूसरे से सटकर थर्मस में रखी चाय पीने लगा। इनकी हरकतों को आस-पास बैठी कई सवारियां नजर अन्दाज कर रही थीं तो कुछयों की निगाहें इनके कार्यकलापों पर शुरु से ही टिकी हुयी थीं।

शीशे को रूमाल से साफ करके एक महिला बाहर झांकने लगी।

तुफान थम गया। बोनट पर बैठे बालम और जागीर सिंह हाथ रगड़-रगड़ कर गर्मी पैदा कर रहे थे। हरेक के मुंह से धुंआ निकल रहा था। मुट्ठी बनाकर फूंक मारने लगे।

"अब गाड़ी जा सकती है सरदार साहब ? बीच में बैठे किसी ने पूछा।

"बर्फ बहुत जम गई है लाला जी···उतराई विच्च जे गड्डी स्लिप कर गई ते ?"

'स्लिप' सुनते ही कईयों के हृदय स्लिप होते-होते बचे। पिछली बार शिमला जिले में बर्फानी तूफान में हुयी एक दुर्घटना का पता अगले दिन दोपहर को चला था।"

कुछ यात्री चलने के पक्ष में थे कई और प्रतीक्षा करने की।

"ग्यारह यहीं बज गए···आंटी वेट करती होंगी मम्मी ने फोन कर दिया था···मैं आ रही हूं," पहिए वाली सीट पर बैठे दम्पति आपस में कह रहे थे।

जागीरे ने वाहे गुरु का नाम ले स्विच दबाया। पर बस में कोई हरकत नहीं हुयी।

"लगता है डीजल जम गया···इब तो धक्का भी न लगेगा," बालम ने शंका व्यक्त की, "न्यूट्रल पर ब्रेक न लगी तो ?"

एक फुट बर्फ पड़ चुकी थी। आगे पीछे रास्ता बन्द। कोई ट्रक या सेना का वाहन भी नजर नहीं आ रहा था। ऐसे ही फंसे होंगे सभी कहीं न कहीं।

बालम को याद आया रेलवे लाईन पार कर के एक मकान है किसी का वही कुछ देखते हैं। भूख भी लगी थी।

बस स्टार्ट करने वाली रॉड लेकर वह ऊंचे-ऊंचे कदम भरता टार्च से देखते-देखते उस मकान की ओर बढ़ा। गिरते पड़ते पहुंच कर उसने कुंडा खटखटाया।

माठू राम ने रेलवे लैंप की रोशनी ऊपर उठा कर पूछा, "कौन है ?"

"मैं हूं कंडक्टर···बस खराब हो गयी है···आपकी मदद चाहिए।"

"आओ जी···आओ अन्दर आई जाओ तुसे।"

माठू ने घर वालों को जगाया और जगह बनाने लगा। "पराल बिछाई दे लायक रामा···उपरे बस खराब होई गयी मुआ···पांदे ते अंगीठी भी लेई आ हुब्बे खे···सवारियां जो ठंड लगरी होणी···जबरदस्त बर्फ पड़ी है," माठू ने सबको उठा दिया।

धीरे-धीरे सभी सवारियां उतराई उतर कर माठू राम के घर ग्रा गई।
नर्म गद्दों पर सोने वालों को घास पर बैठने में बड़ा मजा ग्राने लगा।
जिसके सिर पर सरदार जी का ब्रीफकेस गिरा था वे दोनों एक-दूसरे का हाथ पकड़े हुए चले ग्रा रहे थे। शिकायत पुस्तिका की मांग करने वाले बुजुर्ग को जागीरे सिंह ने सहारा दिया ग्रौर टार्च दिखाता हुग्रा ले ग्राया।
'ग्रठन्नी बकाया' वाले सज्जन बालम के साथ-साथ चल रहे थे।
जिनके पास खाने का सामान था वे खोल-खोलकर एक-दूसरे को दे रहे थे। सीट के पीछे लड़ने वाले, 'इधर ग्रा जाग्रो···यहां लेट जाग्रो' कहकर स्थान बना रहे थे।
जिसे जहां जगह मिल रही थी पसरे जा रहे था। माठू राम के परिवार ने ग्रंगीठियां सुलगा दी। बिजली फेल हो जाने से लालटेन या दीपों से गुजारा कर रहे थे सब।
नव विवाहित जोड़ा चुपके से एक कोठरी की ग्रोर खिसक गया।
जागीर सिंह ने भी सोलन नम्बर वन खोल ली। समय काटने के लिए कोई ग्राप बीती घटना सुनाने लगा तो कई बूढ़े स्वतन्त्रता पूर्व हुए लाल हिमपात की कहानी छेड़ बैठे। साठ सवारियां नहीं बल्कि साठ सदस्यसीय परिवार लग रहा था यहां। माठूराम के सभी लोग चाय दे रहे थे।
सुबह बादल छंट गये।
सूर्य की पहली किरण ने पर्वत श्रंखला को नारंगी बना दिया।

□

रुका हुआ फैसला

आफिस में ही उसे लगा, पेट के निचले हिस्से में भार कुछ बढ़ने लगा है। सुबह घर से चलते समय सोचा था शायद नैपकिन आज काम आ जाए लेकिन बात कुछ दूसरी ही लगने लगी थी जिसकी उसे पहले से ही आशंका थी।

लंच के दौरान जब वह अपने कलीग्ज के साथ बैठी थी तो उबकाई आने को हुई थी जिसे उसने बखूबी रोक कर भेदती आखों से स्वयं को बचा लिया था और सिर दर्द का बहाना बना कर हाफ डे लीव टिका, घर आ गयी।

चार लड़कियों तक पहुंचने के बाद उसे इतना अनुभव तो हो ही चुका था कि इस बार भी कहीं न कहीं वह चूक गई है। रिकी के बाद ऐसा हो जाने पर जो कुछ उसे झेलना पड़ा था उसकी स्मृति मात्र से ही अब भी पेट के निचले भाग में उसे पीड़ा महसूस होने लगती है।

लेकिन डाली को वह चाह कर भी इस संसार में आने से नहीं रोक पाई थी। डाक्टर बसन्त ने साफ-साफ कह दिया था, "यू आर टू लेट···अब तक क्या कर रहे थे ?

"यू नो दिस इज़ फोर्थ मंथ रनिंग...आइ कांट टेक एनी रिस्क।"

डाली के आ जाने से सास तो क्या मम्मी भी चेहरे पर आए अवसाद को छिपा नहीं सकी थीं। सभी ने मिसेज अग्रवाल को ऐसे घूरा था मानों एक बहुत बड़ा अपराध कर दिया हो उसने।

अपराध तो था ही···ऐसा अपराध जिसकी सजा एक को नहीं, कईयों

को उम्र कैद की तरह भुगतनी थी। पर वह करती भी क्या ? तीन महीने तो गलत फहमी में ही निकल गये थे और चौथा दवाई के चक्कर में और समय जैसे हाथ से फिसल कर उसे अब मुंह चिढ़ा रहा हो।

नर्सों तक ने मजाक किया था उससे। डाक्टर ने मिस्टर अग्रवाल को झाड़ने के अन्दाज में कहा था, "आप दोनों एजूकेटेड हैं, एम्पलायड हैं फिर इतनी बड़ी गलती ?"

अग्रवाल न जाने क्या सोच कर चुप रह गये। दिल में तो आया था कि कह दे कन्ट्रासैप्टिव का पुराना स्टाक खुद रखते हो और दोष जनता के सिर पर मढ़ते हो। वे तो केवल खांसी की दवा लेने आये थे और डाक्टर ने ही जबरदस्ती वे उनकी पाकेट में ठूंस दिये थे।

डाली के आते ही उनका नाम मिसेज अग्रवाल की बजाय 'बेचारी अग्रवाल' हो गया था। श्रीमती सिन्हा तो उसी दिन शाम, सभी को बटोर कर हाल-चाल पूछने के बहाने आ धमकी थीं।

उसे भी मालूम था कि आजकल किसी को दूसरे का हाल पूछने में विशेष रूचि नहीं होती। वह मात्र औपचारिकता होती है आधे लोग जिनके आगे आप अपना दुखड़ा रोते हैं आप के दुखड़ों में रूचि नहीं रखते और शेष आधों को आप के दुखड़ों पर प्रसन्नता ही होती है। दुःख मात्र खुद को ही होता है...खुद को ही झेलना होता है।

उसके बैड के चारों ओर सभी कलीग्ज पसर गई थीं और दफ्तर की बातों से लेकर बच्ची के रखाव पर बातें हुई थीं।

चौथी कन्या आने के बाद घर में मातम सा छाया रहने लगा था। काफी दिनों बाद सब कुछ सहज हो पाया था और गृहस्थी की गाड़ी आऊटर सिग्नल तक पहुंचने जैसी गति से चल निकली थी।

श्रीमती अग्रवाल ने घर आकर अपनी समस्या सास से बताई।

"इस बार जरूर पुत्रर देवेगी माता रानी" पोपले मुंह में हवा भरती हुई सास खुशी-खुशी उस किनारे जा पहुंची जहां दीवाली पर खरीदी दुर्गा माता की मूर्ति रखी थी।

"लेकिन माता जी यह बात नहीं है" उसने कहना चाहा।

"बात क्यूं नहीं है···मैं तो रोज माता से यही मांगती हूं दर्शन भी एक है मेरे, और दर्शन को माता रानी एक ही पुत्रर दे दे फिर भले मुझे उठा ले" बुढ़िया ने बात पूरी कर दी।

"हो सकता है ऊपर वाले ने पुत्र देने का कोई न कोई बहाना बना लिया हो...पिंकी के बाद से ही तो वह पुत्र की प्राप्ति के लिए क्या-क्या न करती रही है, शायद देर से ही सुनी हो उसने, और अग्रवाल साहब भी तो कहां-कहां मन्नते मांगते रहे हैं शायद किसी पीर फकीर की ही दुआ लग गई हो," सोचते-सोचते आँख लग गई।

दूसरे कमरे से सास समझा रही थी, "नीलम तू चिन्ता न कर···सब पल जाते हैं आजकल। लड़कियां पराया धन हैं···एक लड़का होना बहुत जरूरी है... बस चलता रहेगा···नहीं तो कौन पूछेगा, तेरे ससुर जी को कि अपने वक्त में अंग्रेज भी उनकी कद्र किया करते थे।

अग्रवाल साहब इस उम्र में सैक्शन आफिसर के पद तक पहुंच गये थे। पहली लड़की होने के बाद ही उन्होंने सभी डाक्टरों, वैद्यों, हकीमों से इलाज करवाया था। कैसे-कैसे कुश्ते, भस्में चखनी पड़ी थीं। सिद्ध बाबाओं की राख तक चाटी थी।

लेकिन आ गई थी पिंकी···इतने पापड़ बेलने के बावजूद। उम्मीद नहीं छोड़ी थी। हर ज्योतिषी बताता था। 'एक पुत्र का योग बनता है।' उस योग को देखते दिखलाते दो जमा दो करके चार-चार बेटियों से रीढ़ की हड्डी दुहरी हो गई थी।

अग्रवाल साहब के टूर से लौटने पर जब श्रीमती अग्रवाल ने 'कुछ होने को है' बताया तो वे भी असमंजस में पड़ गये।

एक बार उन्हें बी. ए. द्वितीय वर्ष में पढ़ने वाली पिंकी का ध्यान आया तो दूसरी ओर वह रात सामने आ गयी जब दम्पति बीमार थे और दर्द उठने पर कोई पानी की गर्म बोतल देने वाला भी नहीं था घर पर।

कपड़े बदल लेने के बाद बोले, "चार हफ्ते तक वेट करो टैस्ट करवा लेते

हैं। लड़का हुआ तो रख लेंगे नहीं तो...।"

"ठीक है लेकिन अब मैं इस झमेले में नहीं पड़ता चाहती···अब मेरे बस का नहीं पोतड़े धोना धुलवाना...इस उम्र में न जाने बच्चा भी ठीक-ठाक हो कि नहीं...आगे ही शरीर बिगड़ा पड़ा है।"

पर 'कुछ होने को है' सुनते ही अग्रवाल जी की आंखों के कोरो से फैलती हुयी झुर्रियां डाई की हुई कलमों तक खिच आईं। और फैल गया आंखों के आगे जिन्दगी का कैनवास जिस पर रेखा चित्रों में उभरने लगा एक नन्हा-मुन्ना वारिस।

चौथा सप्ताह-सप्ताह होते ही दोनों लाम्बा क्लीनिक पहुंच गये। पहले टैस्ट की रिपोर्ट दो घंटे में आ गयी। डाक्टर ने विश्वसनीयता के लिए तीन टैस्ट किये। परिणाम एक ही था।

"कान्ग्रेच्यूलेशन्स मिसेज एण्ड मिस्टर अग्रवाल," डा० लम्बा ने हाथ मिलाते हुए कहा।

रिर्पोट लेकर दोनों घर आ गये। सब से अधिक प्रसन्नता माता जी को थी।

"मैं तो जानती थी इस बार माता रानी हमें जरूर बेटा देगी, मैं आज ही प्रसाद चढ़ाऊगीं।"

तभी 'तो शनिचर' की बांग देने वाले को पीछे से आवाज लगा कर उन्होंने उसे आटा, नमक और सवा रुपये दे दिये।

रात को लेटते समय श्रीमती अग्रवाल कुछ उखड़ी-उखड़ी सी थी। चिर प्रतिक्षित बेटे के आगमन की सूचना से कोई झुरझुरी नहीं हुयी न ही चौंक जाने वाली कोई बात। चार लड़कियों के बाद पुत्र प्राप्ति पर और कोई होता तो चहक उटता, जश्न मनाता।

अपने डाइ किए हुये बालों में सीकरी कुरेदते हुए वह सोचने लगीं, 'अब लड़का हो या लड़की क्या अन्तर पड़ता है? आधी उम्र तो इस चाह में ही निकल गयी है। बाकी बच्चों की सेवा में ही गुजर गयी तो आराम कब मिलेगा।"

अग्रवाल जी की ओर मुड़ते हुए वह बोलीं। "रखें या नहीं।"

"अभी भी तुम यही सोच रही हो? शक की कोई गुंजाइश है क्या?"

"नहीं यह बात नहीं, मैं सोच रही हूं पिंकी का मैच अगले दो तीन सालों में ढूंढ़ना होगा। इस उम्र में एक और बच्चे का आ जाना हास्यापद नहीं लगेगा?" आफिस में तुम्हें और मुझे लोग क्या कहेंगे?"

"देखो लड़कियां पराया धन तो हैं ही···इन्हें तो जाना ही है...याद है दिसम्बर में जब तुम्हारी चोट की जगह दर्द उठी थी और ये चारों छुट्टियों में नानी के गयी हुयीं थी तो तुम्हें कितनी मुश्किल हुयी थी। जवानी में तो चल जाता है पर साठ पार करते ही कोई न कोई सहारा चाहिये होता है। बेटा-बहू ही काम आते हैं बुढ़ापे में...दामाद नहीं।"

"ऐसा नहीं होता जाने बेटा कैसा निकले...बहू कैसी आए। अब देख लो शर्मा जी को। एक नही दो-दो सपूत हैं। दोनों अमेरिका जा विराजे हैं। अब तक एक बार नयना की मैरिज में ही आये थे। शर्मा—शर्मानी दोनो खुद रोटियां ठोकते हैं—क्या सुख मिला उन्हें दो-दो जन कर?"

"ऐसी बात है तो सुधीर को ही अपने पास रख लेंगे।"

"हूं सुधीर! वह रहेगा हमारे पास और वह करेगा सेवा तुम्हारी! अग्निहोत्री ने भी अपना भतीजा लिया था। पढ़ाया-लिखाया, शादी की और जब सुख के दिन देखने थे तो जनाब अपने 'असली' मां-बाप से जा मिले और जायदाद भी ले गये। बैंक से पैसा भी साफ कर दिया।"

"तुम यह देखो हम क्या पांचवीं सन्तान का पालन पोषण करने कि स्थिति में हैं। पिछले महीने ही तुमने रिकीं के कालेज टूर के लिए पी. एफ. से दो हजार निकलवाये थे और अब मेडिकल में जगह मिल गयी तो रखो पांच हजार का इन्तजाम।

"वह हो जाएगा तुम चिन्ता न करो।"

"हो जायेगा···वही कर्ज़ लेकर न···अपनी आमदनी से तो नहीं ना।"

"चलो कहीं से भी सही।"

"बड़ी के लिए अभी से देखना शुरू करो। सिम्पल मैरिज कहते-कहते

भी पचास हजार कहीं नहीं गया। अभी तो लड़का देखने दिखाने में ही एक सगाई जितना खर्च हो जाता है। पढ़ाने-लिखाने पर किया गया खर्च किसी गिनती में नहीं आता जैसे उसका कोई मूल्य ही नहीं है। और अपनी बिरादरी तौबा बाबा मेरी तौबा।''

''पढ़ाएंगे तभी तो लड़का अच्छा मिलेगा।''

''पढ़ा लो—फिर भी देखती हूं बिना लिये कोई ले जाए चारों लड़कियों को तीन कपड़ों में। अभी पढ़ाने के बाद नौकरी का चक्कर है उसके लिये भी रखो नोट तैयार।''

''भगवान ने हमारी सुन ली है—उसका शुक्र मनाओ कल मन्दिर जा आना...घर में खुशी आने वाली है अब तो पहले ही पता चल चुका है। डाली की तरह नही होगा अब, कि नर्स का मुंह देखते-देखते रात हो जाए। यही संशय कि लड़का होगा या लड़की।''

''तुम्हारी रिटायरमेंट में अब पन्द्रह साल बचे हैं। तुम रिटायर हो चुके होंगे और लड़का दस जमा दो में फंसा होगा...और इंतजार पच्चीस साल तक करो।

''आखिर तुम चाहती क्या हो,'' अग्रवाल जी कुछ आवेश में बोले।

''यही कि मैं इसे नहीं रखना चाहती। एक बच्चा और रखकर गृहस्थी चलनी मुश्किल है। अभी भी दोनों की तन्खाह से कुछ नहीं बचता। मेरे एकाऊंट में छः साल से सिर्फ पांच हजार कुछ रुपये ही जुड़ पाये हैं। हम वर्तमान में जी रहे हैं लेकिन भविष्य भी कमोबेश हमारे हाथों में अवश्य है।''

''नहीं मैं ऐसा नहीं चाहता।''

''सवाल चाहने न चाहने का नहीं है। आने वाली कठिनाइयों से जूझने का है। जानबूझ कर अपनी राहों में कांटे बिछा कर भाग्य को दोष देने का क्या लाभ है?''

''अगर भाग्य कुछ न होता तो ज्योतिषी पुत्र योग की भविष्यवाणी न करते। तुम्हारे हाथ में होता तो चार-चार लड़कियां न आ जाती।''

"एक नये मेम्बर का अर्थ है आपकी आधी कमाई साफ हो जाना। अभी लड़कियों के लिए कम से कम तीन लाख का इन्तजाम रखो। सिंपल मैरिज के टटों में भी इतना लग जाता है।"

"यह इन्तजाम कहीं न कहीं से हो जाएगा।"

"आजकल लड़कियां-लड़के बराबर हैं। अब तो सुप्रीम कोर्ट ने भी कानून बना दिया है। मां-बाप लड़की से गुजारा भत्ता मांग सकते हैं। उनका अपना एक अस्तित्व है।"

"हां आयेंगी तुम्हारी लड़किया तुम्हें कहने, लो मम्मी जी ये रही हमारी तन्खवाह अपना गुजारा करो। बहुत पैसा खर्च कर दिया है आपने हमपर और हमारी पढ़ाई व ब्याह पर। झोली सिलवा लो। लड़का लड़का ही है। दामाद दामाद। दामाद से लड़के वाली बात नहीं की जा सकती। अभी भी लड़की के यहां खाना-पीना नहीं होता और तुम लड़की से अपेक्षा कर रही हो तुम्हारा सहारा बनने की।"

"तुम जो मर्जी कहो...मुझे नहीं चाहिए लड़का। मुझे मालूम है अब हम उसका खर्चा नहीं उठा सकते। एक साढ़ी खरीदने खरीदने कर रही हूं...पाच साल हो गए हैं। स्वीटी की स्कूल यूनीफार्म तीन साल से वही है। बूट तक नहीं खरीद सके हो तुम। एल. आई. जी. के क्वार्टर की किश्तें तक में कठिनाई होती है। सारी आय रख रखाव में लग रही है। मंहगाई के साथ तुम्हारी आय नहीं बढ़ी...आयकर बढ़ गया। अरे चार-चार लड़कियां संभालना आसान है आज-कल क्या...?"

"कहते हैं चार लड़कियों के बाद हुआ लड़का लक्की होता है।"

"लक्की क्या होगा...यही कि हम उसके कन्धों पर चार-चार बहनों का बोझ लाद देंगे, जवान होते ही हमारी तीमारदारी में लग जाए...और इसकी भी क्या गारन्टी है कि हमें वह साथ ही रखेगा। बीसवीं सदी में ही, बेटा कहीं है बाप कहीं तो इक्कीसवीं का क्या पता?"

"मैं उस होने वाले बच्चे का हकदार हूं, उसका बाप हूं, पूरा अधिकार है मेरा।"

"जितना तुम्हारा है उससे कहीं अधिक मेरा है। यह मुझे भी देखना है कि जन्म देकर हम खुद को और उस निर्दोष को इस जंजाल में फंसा रहे हैं। चादर से बाहर पैर पसारने का अंजाम तुम जानते हो।"

"जिसने जीवन देना है वह खाने के लिए भी साधन जुटाता है।"

"खाना-पीना आसमान से नहीं टपकता। पेट काटकर उपलब्ध कराना पड़ता है। चार की जगह दो रोटियों में गुजारा करता होगा। ऊपर की आमदनी में मैं विश्वास नहीं करती। आय के साधन सीमित हैं कोई पुश्तैनी जायदाद भी तो नहीं है जिसका किराया आता हो···कोई सहारा बन सके।"

"लोग यहां लड़के के लिये तरसते रहते हैं, दशरथ तक ने भगवान से पुत्र प्राप्ति की कामना की थी। अकबर नंगे-नंगे पैरों ज्वाला जी गया था··· उसने तुम्हारी झोली में फूल दिया है जिसे तुम जानबूझ कर तोड़ कर फेंकना चाहती हो।"

अगले दिन मिसेज अग्रवाल लाम्बा हास्पिटल में खड़ी थीं। बाहर बैठे-बैठे सोचती रही कि घर लौट जाऊं या डाक्टर से मिल लूं।

एक जीव हत्या का प्रश्न था। अग्रवाल साहब इसके लिए बिल्कुल तैयार न थे।

"यह क्षणिक पीड़ा उस पीड़ा से बेहतर है जो उम्र भर की होती है। कई बार उसका मन हुआ लौट जाए। अभी तक किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सके थे दोनों।

मन बनाकर वह डाक्टर के कमरे में पहुंच गई।

"आईये आईये मिसेज अग्रवाल···मिठाई का डिब्बा लाई हैं क्या ?" डाक्टर ने पूछा।

"सॉरी डॉक्टर साहब···आई हैव चेंज्ड मॉय मांइड।"

"व्हॉट डु यू मीन ?"

"आई वांट टर्मीनेशन ऑफ प्रैगनेंसी।"

"व्हाई ? हैव यू गौन मैड···मैडम लड़कों के लिए लोग न जाने कहां-

कहां भटकते हैं और आप···।"

"मुझे मालूम है मैं क्या करने जा रही हूं।"

"आप खुद न रखना बच्चे को...किसी को दे देना।"

"किसी को देकर मन उसी में लगा रहेगा···अभी थोड़ी सी तकलीफ होगी, नहीं तो सारी उम्र···।"

आवश्यक फीस जमा करने व फार्म भरने पर वह आप्रेशन थियेटर में चली गयी।

कुछ घंटे बाद बाहर आने पर उसे लगा पेट के निचले हिस्से के भार के साथ-साथ दिमाग का भार भी कम हो गया है।

□

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. G-1288
Date 30.9.92
SIMLA

समझौता :

इस्मत चुग़ताई

ख्वाजा अहमद अब्बास

उर्दू की नयी कहानी में जिन दो नामों ने अपने समय में सनसनी फैला दी, उनमें हैं सग्रादत हसन मंटो और इस्मत चुग़ताई। जहां मंटो की कहानी 'धुआं' ने भद्र समाज की मान्यताओं को चुनौती दी वहां यहीं काम इस्मत चुग़ताई की कहानी 'लिहाफ' ने किया और फिर इस्मत चुग़ताई लगातार एक के बाद एक ऐसी कहानियां लिखती चली गयीं जिसमें स्त्री और पुरुष के बदलते हुये रिश्तों को नये सिरे से देखने और समझने की ना सिर्फ सोच ही दी बल्कि साहस भी प्रदान किया। इस्मत चुग़ताई ने कई उपन्यास भी लिखे जो उनकी अपनी अनोखी तरज़ के नमूने हैं। 'टेढ़ी लकीर' के बाद '**समझौता**' (मासूमा) उनकी बेबाक कलम का साक्षी है।

अब्बास की कहानियाँ आम लोगों की जिन्दगी को बड़े ही सहज और स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत करती हैं। शायद वे पहले निर्माता-निर्देशक थे जिन्होंने नये सिनेमा की शुरुआत की। 'धरती के लाल' से 'शहर और सपना' और 'नक्सलाइट' तक उनकी कितनी ही फिल्में आज भी व्यवसायिक सिनेमा को चुनौती दे रही हैं। बिलटज में उनका आखिरी पन्ना जिसे वे 'आजाद कलम' के नाम से लिखते रहे वह करीब अर्द्धशती के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं के प्रगतिशील विश्लेषण के दस्तावेज हैं। अब्बास का उपन्यास '**अंधेरा उजाला**' फिल्म जगत की अंधेरी बैक स्ट्रीट पर आधारित है।

मूल्य 25.00

चित्रकूट

दिल्ली-कलकत्ता